RNI No. 7127/60 डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City / 411 2020-22

संघशक्ति

मासिक समाचार पत्रिका

वर्ष : 58 अंक : 01 प्रकाशन तिथि : 25 दिसम्बर कुल पृष्ठ : 36 प्रेषण तिथि : 4 जनवरी, 2021

शुल्क एक प्रति : 15/- वार्षिक : 150/- रुपये पंचवर्षीय 700/- रुपये दस वर्षीय 1300/- रुपये

जीने के बहाने मुझे आए नहीं, रंग बिरंगे रंग मुझे भाये नहीं,
तेरे ही रंग में जीने के ढंग हैं, प्राणों में प्राण को जोड़ दे।

25 जनवरी पूज्य तनसिंह जी के जन्म दिवस पर शत् शत् नमन

आँखों में जो डालो तो चुभेंगे ही नहीं, तेरे इंगित बिना दुनिया में झुकेंगे ही नहीं,
सच कहता हूँ मेरे स्नेह की ऐसी ही रसम, तेरी बगिया में नया पाया जनम।

जीवनसिंह नरधारी	गोपालशरण सिंह सहाडा	बृजपाल सिंह टामटिया अहाड़ा	गुलाब सिंह बिजेरी
डीग्गेंद्र प्रताप सिंह बेमला	कमल सिंह नौगावाँ	गिरिराज सिंह रुपाहेली बड़ी	सवाई सिंह बिजेरी (द्वितीय)
पुष्पेंद्र सिंह सज्जन सिंह का गड़ा	देवेन्द्र सिंह बाज्यास	कुलदीप सिंह तित्यारी	लक्ष्मण सिंह बाडापिचानोत
घनश्याम सिंह लाम्बापारडा	हेमेंद्र सिंह रोलसाबसर	गुलाब सिंह वरिया	महेंद्र सिंह रेवाड़ा
लक्ष्मणसिंह बड़ौली माधोसिंह जी	रघुनंदन सिंह निम्बाहेड़ा	स्वरुप सिंह बिजेरी	शम्भु सिंह लाम्बापारड़ा
संदीप सिंह बनकौड़ा	छुट्टन सिंह दाबड़दुम्बा	हर्षवर्धन सिंह भीमपुर	अजयराज सिंह सज्जनसिंह जी का गडा
दिव्यराज सिंह वलाई	वीरेन्द्र सिंह तलावदा	दलपतसिंह गुड़ा केशर सिंह	शिवदयाल सिंह खुड़ी

संघशक्ति

4 जनवरी, 2021

वर्ष : 57 अंक : 01

-: सम्पादक :-

लक्ष्मणसिंह बेण्यांकाबास

शुल्क - एक प्रति : 15/- रुपये, वार्षिक : 150/- रुपये, पंचवर्षीय : 700/- रुपये, दस वर्षीय : 1300/- रुपये

विषय - सूची

☞ नव वर्ष-सन्देश	✍	04
☞ समाचार संक्षेप	✍	05
☞ चलता रहे मेरा संघ	✍ श्री भगवानसिंह रोलसाहबसर	06
☞ पूज्य श्री तनसिंहजी (के सम्बन्ध में)	✍ श्री चैनसिंह बैठवास	06
☞ मेरी साधना	✍ प्रो. रूपसिंह लिम्बड़ी	10
☞ प्रभु की पीड़ा	✍ श्री कैलाशपालसिंह इनायती	15
☞ महान् क्रान्तिकारी-राव गोपालसिंह-खरवा	✍ डॉ. भंवरसिंह भगवानपुरा	17
☞ राजा चक्कपेण के त्याग का प्रभाव	✍ श्री जयदयाल गोयन्दका	19
☞ खरपतवार	✍ कृपाकांक्षी	24
☞ मैंने देखा	✍ श्री दर्शक	25
☞ हमारा संकल्प	✍ श्री महिपालसिंह चूली	26
☞ जीवित समाज	✍ श्री गिरधारीसिंह डोभाड़ा	27
☞ चित्रकथा-'लोकदेवता बाबा रामदेव जी'	✍ श्री ब्रजराजसिंह खरेड़ा	30
☞ स्वास्थ्यप्रद हर्बल चाय	✍ स्वामी गोपालआनन्द बाबा	32
☞ अपनी बात	✍	33

श्री क्षत्रिय युवक संघ

मुख्यालय :
ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा, जयपुर-302012

संघप्रमुख प्रवास :
आलोक आश्रम, बाड़मेर

22 दिसम्बर, 2020

नव वर्ष-सन्देश

प्रिय आत्मीयजन

जय संघशक्ति !

संपूर्ण विश्व की राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं आर्थिक परिस्थितियाँ द्रुतगति से बदलती जा रही हैं। व्यक्ति अपने आप में एक इकाई के रूप में बहुत बदल चुका है, बदलता जा रहा है। परिवार बदल रहे हैं, टूट रहे हैं। लोगों की प्राथमिकताएँ बदल रही हैं। उत्तरदायित्व बदलते जा रहे हैं। प्रतिज्ञाएँ व आस्थाएँ बदलती जा रही हैं, विश्वास बदलते जा रहे हैं। सब कुछ वह नहीं रहा जो होना चाहिये।

नासमझ व गैर जिम्मेवार लोगों की चेतना शक्ति लुप्त प्राय: हो चुकी है इसलिए वे कुछ कर नहीं सकते किन्तु चिन्तनशील व्यक्ति इस सब को होते हुए देखकर चुप नहीं रह सकता। इस प्रकार के लोगों के अनेक समूह इस पर चिन्तन कर रहे हैं इस आसन्न संकट से मानवता को कैसे बचाया जाए।

ऐसी ही एक प्रतिकूलता विश्वव्यापी महामारी कोविड-19 बनकर आई। क्षुद्र दृष्टि वाले लोगों ने बहुत कुछ खोकर हार मान ली किन्तु संसार में कुछ कर गुजरने वाले लोग सतत् संघर्षशील रहकर विश्व कल्याण में लगे हैं।

मनुष्य जाति, समाज, धर्म व राष्ट्रों की विचलितता को रोककर स्थिरता प्रदान की जाए। मानव जीवन में मानवीय मूल्यों की जो गिरावट आई है उसको सही दिशा प्रदान की जाए। इस विषय पर अनेक व्यक्ति और समूह काम कर रहे हैं।

उपरोक्त सभी बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए हमारा संघ लम्बे समय से कार्य कर रहा है। इसलिए हम जानते हैं कि यह कार्य कितना आवश्यक है और कितना कठिन है। पूज्य तनसिंहजी ने सन् 1946 में 22 दिसम्बर के पवित्र दिन पर संघ की स्थापना कर मानव जाति पर कितना उपकार किया है।

इस कार्य में लगे लोग तपस्वियों का जीवन जीकर तन, मन और धन से लगे हुए हैं। उनका संकल्प है कि कैसी भी परिस्थिति आ जाए पर सतत् यज्ञ के रूप कार्य को करते रहे हैं, करते रहेंगे। ऐसे देव स्वरूप महामानव पूज्य तनसिंहजी एवं उनके सहयोगी रहे हैं और आज भी ऐसे ही असंख्य निर्लिप्त साधक निर्धूम साधना कर रहे हैं। आप सभी लोगों ने जो अपूर्व एवं अतर्क्य सहयोग किया है, मैं आप सबका आभारी, कृतज्ञ एवं ऋणी हूँ जिससे हम इस पावन पर्व-संघ स्थापना दिवस को मनाने के अधिकारी बने हैं।

आप सभी से अपेक्षा है कि आप अपनी आत्मा को जागृत रखकर अपना आत्म साक्षात्कार करके कभी अपने आपको सोने न दें और भगवत प्राप्ति के मार्ग संघ कार्य को करते रहें।

भगवान से सदैव प्रार्थना है - चलता रहे मेरा संघ, यही तो मेरा जीवन धन।

आप सबका सहयोगाकांक्षी
(भगवान सिंह)
संघ प्रमुख

समाचार संक्षेप

संस्थापक का निर्वाण दिवस :

श्री क्षत्रिय युवक संघ के संस्थापक पू. तनसिंहजी का निर्वाण दिवस 7 दिसम्बर को संघ के विभिन्न क्षेत्रों में मनाया गया। 7 दिसम्बर, 1979 को पू. तनसिंहजी का स्वर्गवास हुआ था, तब से ही प्रतिवर्ष उनकी स्मृति में कार्यक्रम आयोजित होते रहे हैं। महामारी के चलते इस वर्ष बड़े कार्यक्रमों का आयोजन क्योंकि निर्देशों के अनुसार नहीं किए जा सकते, इसलिए कार्यक्रमों का रूप इस बार बदला गया। संघ के संभाग स्तरों पर कार्यक्रम हुए लेकिन भौतिक उपस्थित की जगह वर्चुअल कार्यक्रम सम्पन्न हुए। इन कार्यक्रमों में संभाग के स्वयंसेवक जुड़े तथा पूज्यश्री के प्रति अपनी श्रद्धांजलि दी तथा उनका पुण्य स्मरण किया। शाखा स्तर पर या जहाँ कहीं संख्या मर्यादित रखी जा सकती थी, वहाँ भौतिक उपस्थिति के साथ भी कार्यक्रम सम्पन्न हुए।

पू. तनसिंहजी ने जो हमें मार्ग उपलब्ध करवाया है, वह मार्ग योग का मार्ग है, अर्थात् ईश्वर मिलन का मार्ग है। ईश्वर से मिलन ही प्रत्येक प्राणी का लक्ष्य है, क्योंकि हम सब उसी की तो सृष्टि हैं। लेकिन सांसारिक माया भी तो उसी की सृष्टि है। वह फिर कमजोर कैसे होती। उस माया को काटकर ईश्वर की राह पकड़ना इसीलिए तो आसान नहीं है। पर उसे आसान बनाने के अनेक मार्ग भी ईश्वर की ही सृष्टि है। ज्ञान योग हो, भक्ति योग हो, कर्मयोग हो, सभी मार्ग वहीं पहुँचाते हैं। अपने स्वधर्म का पालन करना जीवन को सार्थक बना देता है। ईश्वर की ओर बढना ही तो जीवन की सार्थकता है और स्वधर्म का पालन करने वालों को परमसिद्धि, परमेश्वर की प्राप्ति होती है, यह स्वयं भगवान कृष्ण ने गीता में कहा है। श्री क्षत्रिय युवक संघ हमारे क्षत्रियोचित संस्कारों को सुदृढ़ कर उन्हीं संस्कारों के अनुसार जीवन व्यतीत करवाने का कार्य कर रहा है, जो स्वधर्म पालन की राह है, क्षात्रधर्म का मार्ग है। ऐसा अद्‌भुत मार्ग हमें पू. तनसिंहजी ने दिखाया है, अत: उनका पुण्य स्मरण कर उस मार्ग पर अपनी गति को तीव्रता प्रदान करने की प्रेरणा पाते हैं।

बाड़मेर में राजपूत मोक्षधाम में स्थित पू. तनसिंहजी की छतरी पर सूर्योदय से पूर्व पहुँचकर स्वयंसेवक श्रद्धा के साथ पुष्पांजलि अर्पित किया करते हैं। इस बार माननीय संघप्रमुखश्री भी बाड़मेर में ही थे अत: उनके साथ शहर के स्वयंसेवक छतरी पर पुष्प अर्पित करने और पूज्यश्री को नमन करने पहुँचे। संघशक्ति कार्यालय जयपुर में सुबह शाखा के समय में उपस्थित सभी ने पुष्पांजलि अर्पित की तथा भजनों का कार्यक्रम आयोजित किया। बीच में अवसर के अनुरूप सहगीतों से भी प्रेरणा ली। जोधपुर में विश्वविद्यालय पुराना परिसर में कार्यक्रम आयोजित हुआ। गुजरात में भावनगर, सूरत, मेहसाणा आदि क्षेत्रों में कार्यक्रम आयोजित हुए। मेहसाणा संभाग के वर्चुअल कार्यक्रम के अलावा दी गई जिम्मेदारी के अनुसार अलग-अलग गाँवों में पहुँचकर, कार्यक्रम किए। बालोतरा, सिवाना, शिव, उदयपुर, नागौर, बायतु, गुड़ामालानी, जैसलमेर आदि क्षेत्रों की शाखाओं में कार्यक्रम आयोजित हुए। राजस्थान में अनेक स्थानों पर निर्वाण दिवस मनाया गया। क्षात्र पुरुषार्थ फाउण्डेशन की वर्चुअल शाखा में भी कार्यक्रम मनाया गया।

कार्यक्रमों में पू. तनसिंहजी के आदर्श जीवन पर वक्ताओं ने प्रकाश डाला। उनके साहित्य की चर्चा की गई। उनके रचित प्रेरणादायी सहगीतों का आनन्द लिया। अनेक स्थानों पर भजनों के कार्यक्रम भी आयोजित हुए। वर्चुअल कार्यक्रमों में तो सुदूर प्रदेशों से भी लोग जुड़े।

जिनका संपूर्ण जीवन समाज हितार्थ समर्पित हो, जो अपने इस उद्देश्य हेतु अपने जीवन के सभी सुख-भोगों की समाज यज्ञ में आहुति दे डाले, उसका जीवन तो प्रेरणा का अखूर स्रोत है। जो चाहे जितनी प्रेरणा ले।

चलता रहे मेरा संघ

{उच्च प्रशिक्षण शिविर पेमासर में दिनांक 25.5.2011 को संघप्रमुख श्री द्वारा उद्‌बोधित प्रभात संदेश का संक्षेप।}

भगवान कृष्ण ने गीता में कहा है-

या निशा सर्वभूतानां, तस्यां जागर्ति संयमी।
यस्यां जाग्रति भूतानि, सा निशा पश्यतो मुने।।

निशा-अर्थात् रात्रि। भूतानां-अर्थात् सभी प्राणी, चौरासी लाख योनियाँ। चौरासी लाख योनियों को परमेश्वर ने ही बनाया है लेकिन ये परमेश्वर की राह से विमुख हैं। मनुष्य प्राणी को प्रभु ने अपने समीप आने के लिए अन्तिम कृति बनाया। सभी भूत प्राणियों के लिए जो प्रभु से विमुखता है, वह रात्रि है, किसके लिए? जो संयमी नहीं हैं उनके लिए। सभी प्राणी इस निशा में सोते हैं लेकिन जो संयमी पुरुष हैं वे जागते हैं। अर्थात् सभी प्राणी परमेश्वर से विमुखता बनाए हुए हैं लेकिन जो संयमी हैं वे प्रभु के समीप जाने में प्रयासरत रहते हैं। लेकिन सभी भूत प्राणी जहाँ सांसारिक भोग और संग्रह में लगे हुए हैं, जाग रहे हैं, सक्रिय हैं, वह स्थिति मुनियों के लिए निशा है, अर्थात् वे इनसे अलिप्त हैं।

श्री क्षत्रिय युवक संघ संसार से दूर आकर क्यों यहाँ शिविरों में यह सब कुछ कर रहा है, इसका उत्तर इस उपरोक्त गीता के श्लोक में छिपा है। जिस संसार को छोड़कर हम यहाँ अलग आए हैं वह संसार परमेश्वर विमुखता में रमा हुआ है। सभी अन्य योनियाँ स्वभाव से स्वतंत्र हैं पर परमेश्वर ने मनुष्य को अपने समीप आने के लिए बनाया, वह भी अन्य प्राणियों के साथ होकर ईश्वर विमुखता की इस निशा में डूबा हुआ है। लेकिन जो संयमी पुरुष है, वह जागृत है, वह संसार के साथ नहीं रहता, संसार के प्रवाह में नहीं बहता। वह जाग्रत होने से जानता है कि संसार के इस प्रवाह में बहने से परमेश्वर विमुखता हो जाएगी, परमेश्वर ने मनुष्य को जिस चाह के लिए बनाया था, वह चाह खो जाएगी।

श्री क्षत्रिय युवक संघ के लोग परमात्मा की कृपा से परमेश्वर विमुखता के वातावरण को छोड़कर परमेश्वर के सम्मुख होने के लिए संयमी बनकर आए हैं। यह मार्ग आसान नहीं है, कंटकाकीर्ण है। इस झुलसा देने वाली गर्मी में आप लोग यहाँ सभी कार्य कर रहे हैं। यह कठिन तपस्या है। साधारणतया कोई ऐसे कष्टों में से गुजरना नहीं चाहता क्योंकि यहाँ बदले में भौतिक संसार की उपलब्धियों में से कुछ भी प्राप्त नहीं होता। धन, सम्पदा, पद कुछ भी तो यहाँ नहीं मिलता फिर ऐसे कष्ट क्यों सहे जाएँ। परमेश्वर विमुखता में चलने वाले लोगों की यही सोच रहती है। इसीलिए वे ऐसी ही उपलब्धियों में अपना यह अमूल्य जीवन गंवा देते हैं।

श्री क्षत्रिय युवक संघ ऐसा अभियान है जो परमेश्वर विमुखता से मनुष्य को हटाकर परमेश्वर के सम्मुख बनाने का प्रयास करता है। यह अभियान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अभियान है, इसीलिए आसान नहीं है, अनेक बाधाओं से संघर्ष कर आगे बढ़ना पड़ता है। जरा सोचें, सारा संसार जब भोग में लिप्त है, आकण्ठ साधन संग्रह में डूबा हुआ है, तब आप यहाँ कष्टों में रहने क्यों आए हैं? मनुष्य योनि होते हुए भी आज विमुखता के कारण निशा में डूबा हुआ है, तब हम शिविर में इसलिए आए हैं कि यह हमारी जागृति बन जाए। संसार के भोग में लिप्तता मुनियों की दृष्टि में रात है। उस रात से दूर होकर यहाँ जाग्रत होकर हम कर्म में लगें। रात्रि और जागरण क्या है, यह हम स्पष्ट समझ सकें, ऐसा ही यह प्रयास है। संघ ऐसा सुन्दर, कल्याणकारी, आनन्ददायक मार्ग है। संघ के विभिन्न कार्यक्रमों में कर्मरत रहते हुए हम इस समझ की ओर बढ रहे हैं।

गुमराह संसार को मार्ग बताने के लिए पू. तनसिंहजी ने यह एक नायाब मार्ग हमें दिया है। हम निरन्तर इस मार्ग पर चलते रहे तो उन चन्द लोगों में होंगे जो संसार को परमेश्वर सम्मुखता का मार्ग बताएँ। इस विशेषता की हमको जानकारी हो। यह योग का मार्ग है, हमें योगेश्वर बनना है। अर्जुन ही नहीं, कृष्ण भी बनना है। सुदर्शन-चक्र हाथ में आए। भोग व संग्रह भी उपभोग नहीं, उपयोग बने। हम भोग से योग की ओर बढ़ें, यही प्रभु से प्रार्थना है।

✲

<u>गतांक से आगे</u>

पूज्य श्री तनसिंहजी (के सम्बन्ध में)

''जो कुछ देखा, समझा व अनुभव किया''

– चैनसिंह बैठवास

स्वभावत: हर व्यक्ति महत्त्वाकांक्षी होता है। शुरुआती तौर पर हर व्यक्ति निजी महत्त्वाकांक्षाएँ संजोये रहता है। व्यक्ति जब अपने निजी भाव से बाहर निकल कर सामाजिक भाव में जीने लगता है तो व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाओं का लोप हो जाया करता है। फिर व्यक्ति को सामाजिक भाव से परमेष्टि की ओर कदम बढाना चाहिए। सामाजिक भाव से परमेष्टि में प्रवेश ही हम सबका असली ध्येय है। व्यष्टि से समष्टि और समष्टि से परमेष्टि यह विकास की गति है।

जैसा कि हमने देखा शुरुआती तौर पर हर व्यक्ति के अन्त:करण में निजी महत्त्वाकांक्षा छिपी रहती है जिनके पूर्ण होने का वह ख्वाब देखता रहता है। अन्त:करण में संजोयी गयी इस निजी महत्त्वाकांक्षा पर जब चोट पड़ती है, तो उसमें विरोध की अग्नि भड़क उठती है और वह विरोधी बन सामने आ खड़ा हो जाता है। इन निजी महत्त्वाकांक्षाओं से निजात पाने के लिये पूज्य श्री तनसिंहजी ने जो उपाय किये हैं, उनकी ही जुबानी से–

''मैंने अपनी सारी प्रकार की व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाओं को तेरे चरणों पर डाल दिया है, क्योंकि मैंने यह भलीभाँति हृदयंगम कर लिया है, कि इस प्रकार की महत्त्वाकांक्षा का कोई भी स्वरूप तुम्हारा घोरतम शत्रु है। अपने ऐसे बन्धुओं से मैं हमेशा पिंड छुड़ाना चाहता हूँ, जो दिखाई देने में मेरे प्रगाढ़ मित्र हों, लेकिन जिनके अन्त:करण में कोई निजी महत्त्वाकांक्षा छिपकर घात किये बैठी हो। अपने दाहिने हाथ को भी तोड़ा–केवल तेरे लिए।''

अभी तक हमने देखा, बुराई का विरोध सब करते हैं। बुरे काम का विरोध होता आया है और होना भी चाहिए पर आश्चर्य की बात तो यह है कि अच्छाई का भी लोगों ने विरोध किया है। श्री क्षत्रिय युवक संघ जैसे नेक व कल्याणकारी अच्छे काम का भी विरोध होते देखा है। ऐसा विरोध समझ से परे है। जिस क्षेत्र में श्री क्षत्रिय युवक संघ पहुँचा ही नहीं, भनक तक लगी और विरोध शुरू हो गया। विरोध चाहे कितना ही क्यों न हो, जिस काम को होना है, वो तो हो के रहेगा। इन्सान के चाहे कुछ नहीं होता, भगवान को जो करना है, वो कर देते हैं। इन्सान की इच्छा भगवद्‌िच्छा के सामने मात खा जाती है। आदमी भ्रम में जीता रहता है और योजना बनाता रहता है–ये करलूं, वो करलूं, इस तरह उसकी बुद्धि बिना विराम के सोचती रहती है। वह ताजिंदगी भ्रम पाले रहता है और भ्रम में ही जीता रहता है, तब तक, जब तक कि उसके अहंकार का छेदन नहीं हो जाता।

श्री क्षत्रिय युवक संघ के कार्य का विरोध हुआ, इतना ही नहीं, इस प्रवृति को पनपने से रोकने का भरसक प्रयत्न किया गया, पर यह ईश्वरीय कार्य था जिसे अभिव्यक्त होना ही था और हुआ।

''नर चिंति होत नहीं, हर चिंति तत्काल''

जिस प्रवृति (श्री क्षत्रिय युवक संघ) को कुछ लोग मिलकर पनपने ही नहीं देना चाहते थे, वही प्रवृत्ति (श्री क्षत्रिय युवक संघ)–ईश्वरीय इच्छा से आज फल फूल रहा है और उत्तरोत्तर विस्तार पाता जा रहा है। भगवान का यह चौंकाने वाला चमत्कार देखिये, यहाँ इन्सान की इच्छा भगवद्‌िच्छा के सामने मात खा गई। पूज्य श्री तनसिंहजी को श्री क्षत्रिय युवक संघ रूपी अपनी प्रवृति को अभिव्यक्त व प्रचारित करने में पग-पग पर विरोध का सामना करना पड़ा था। संघ प्रवृति का विरोध करने वालों को सम्बोधित करते पूज्य श्री ने कहा–

''एक बार तुम्हारा विरोध एक गृहपति के रूप में खड़ा हुआ। पड़ोसी प्रदेश के एक बोर्डिंग हाउस के गृहपति केवल इसलिए नाराज हो गए कि वे गोपनीयता को पाप मानते हैं और हम गोपनीयता का अभ्यास करते हैं। वचोगुप्ति

और शब्द संयम का अपना महत्त्व है। अभिव्यक्ति सहज स्वभाव है किन्तु उसी अभिव्यक्ति को भाषा के और मन्त्र शान्ति के जाल में डाल देने को तुम पाप समझते थे और केवल इसीलिए तुम्हारा विरोध उठ खड़ा हुआ। तुम्हारे विरोध ने हमें चिन्तित जरूर किया और उसका यह कारण नहीं कि तुम्हारा विरोध हमारे लिए बड़ा संघातक था बल्कि इसलिए कि तुम्हारा विरोध जिस क्षेत्र में हमारे लिये लाभदायक हो सकता है-उस क्षेत्र की रचना वहाँ तब तक नहीं हुई थी। तुम्हारा व्यक्तिगत प्रभाव वहाँ जितना था वहाँ हमारा जीवन और हमारे चरित्र का प्रभाव पहुँचने की प्रतीक्षा कर रहा था। वे लोग जो उस समय उस छात्रावास में रहते थे केवल तुमसे ही प्रभावित थे। उन्होंने अभी तक हमारे जीवन की व्यथा और उसके स्पन्दन का अनुभव नहीं किया था और तुम्हारा विरोध कारगर सिद्ध होने लगा। परन्तु तुम तो अपने उसी कार्य से ही संतुष्ट नहीं हुए बल्कि आस-पास तुम्हारे परिचित सभी गृहपतियों को भी तुमने अपनी ओर करना शुरू कर दिया। एक स्थान पर कोई प्रवृति न चले तो हमें कोई चिन्ता नहीं पर पूरे के पूरे क्षेत्र में जब तुम हमारे कार्य की जड़ उखाड़ने लग गये तो निश्चित रूप से परेशानी पैदा होने लग गई। किन्तु जैसा ऊपर कहा गया है, हमारा वश नहीं चल पा रहा था। हमारी शक्तियाँ बहुत निर्बल थी। कार्य हमें बहुत कुछ करना बाकी था, परन्तु विरोध करते समय तुम इस बात को भूल गये थे कि जिस विचार को अभिव्यक्त होने का समय आ गया है, वह सेनाओं से भी अधिक शक्तिशाली होता है। ईश्वर जो इस सृष्टि का रचयिता और नियामक है, अपने आपको अनेक भाँति से फलित करता है। उसी ईश्वरीय इच्छा का यह परिणाम हुआ कि चन्द दिनों में ही तुम्हारा ऐसे स्थान पर स्थानान्तरण हो गया कि तुम चकित रह गए। तुमने स्थानान्तरण को रोकने का प्रयत्न भी किया होगा किन्तु भगवद्िच्छा को कौन परास्त कर सकता है। तुम्हें आज यह जानकर बड़ा आश्चर्य होता होगा कि तुम्हारे ही उस छात्रावास में हमारा कार्य फिर सिर उठाने लग गया। कुचली हुई पौध में से कुछ पौधे सहसा फिर उठ गए हैं और अब तुम्हारा विरोध भी उन्हें समाप्त नहीं कर सकता। ईश्वर अज्ञानियों को और अल्प बुद्धि वाले लोगों के अहंकार को खण्डित करता ही है। जब तुम यह सोचते हो कि तुम किसी को समाप्त कर दोगे या उसकी विचारधारा को खत्म कर दोगे तो तुम यह बात नहीं जानते कि तुमने अपनी क्षुद्र शक्तियों का आवश्यकता से अधिक भरोसा कर लिया है। कार्य कराने वाला वह परमेश्वर अपनी माया में न जाने कितने तुम्हारे जैसे लोगों को भ्रम में डाल सकता है और उस भ्रम का छेदन तब होता है जब हमारे अहंकार का भी छेदन होता है।''

विरोध के और भी कई कारण हो सकते हैं जिनमें किसी व्यक्ति या संस्था की व्यवस्था में पायी जाने वाली कमजोरियों के विरुद्ध उठने वाली आवाज को दबाने व अपनी सत्ता को बचाने के लिए विरोध होते देखा गया, कहीं पर निष्क्रिय व्यक्ति या संस्था ने अपनी सत्ता की जड़ों को हिलते देख व अपनी छवि को धूमिल होते देख सक्रिय व्यक्ति या संस्था का विरोध किया, तो कहीं पर अपनी स्वार्थ सिद्धि में बाधक बनने वालों का विरोध हुआ, तो कहीं पर विरोध राजनैतिक कारणों से भी हुआ। विरोध के कारणों में ईर्ष्या भी एक मुख्य कारण रहा है। श्री क्षत्रिय युवक संघ का विरोध करने वालों के सम्बन्ध में पूज्य श्री तनसिंहजी ने जो बताया, उनकी ही जुबान से-

''एक बार तुम्हारा विरोध राजा के सदावृत में उठा। तुमने समाज शास्त्र और राजनीति शास्त्र की कुछ पश्चिमी पुस्तकें पढ ली थी-एक डिग्री हासिल कर ली थी और तुम्हें यह भान हो गया था कि समस्त संसार का ज्ञान-विज्ञान तुम्हारी हथेली पर पड़ा है। तुमने उस समस्त सत्य को असत्य मान लिया जिसका तुम्हारी पुस्तकों में बिल्कुल ही उल्लेख नहीं था। तुम सदैव मेरे सहायक रहे किन्तु तुम्हारे अहंकार ने तुम्हें बरबस यह सोचने को बाध्य किया कि श्री क्षत्रिय युवक संघ का कार्य एक समानान्तर सत्ता की स्थापना कर रहा है। यह तुम्हारी ईर्ष्या का एक विकृत स्वरूप था। तुम अपनी असफलताओं का कारण श्री क्षत्रिय युवक संघ की सफलताओं पर लगा रहे थे। तुम्हारी व्यवस्था में आने वाली कमजोरियों के विरुद्ध उठने

वाली प्रत्येक आवाज को तुम कैसे पसन्द करते। विशेषत: ऐसी आवाज जब तुम्हारे ही विरोध में आ जावे तो तुम अपनी सत्ता को बचाने का जी तोड़ प्रयत्न करते हो। यह स्वाभाविक ही था और इसीलिए तुमने विरोध करना शुरू किया। पहले-पहले तो तुमने दबे शब्दों में मेरे समक्ष ही विरोध किया और नाम बताया समिति का। वास्तव में व्यवस्थापिका समिति का इससे कोई सम्बन्ध नहीं था और उसे इतना सब कुछ विचार करने और सोचने का समय ही नहीं था पर जब तुम विरोधी के रूप में खड़े हुए तो फिर वे विचार करने पर बाध्य भी होने लगे। संयोग की बात है कि ऐसे ही किसी अवसर पर तुम्हारे साथ कोई दुर्घटना हो गई। तुमने इस अवसर का पूरा-पूरा लाभ ही नहीं उठाया, आवश्यकता से अधिक लाभ उठाने पर उतर गये। तुम्हारे गुरु घंटाल जो व्यस्थापिका समिति के सदस्य थे, यहाँ तक नहीं चूके कि वे हम श्री क्षत्रिय युवक संघ के लोगों की आवाज बन्द करने के लिये सत्ताधारियों तक पहुँच गये। पूरा पहाड़ खोदा और निकली उसमें आखिर एक चुहिया ही और वह भी मरी हुई। आज तुम यह समझ रहे हो कि तुमने कोई कार्य को बन्द करके ही सांस ली है किन्तु तुम कितने मूर्ख हो कि जिस नाक से तुमने हमारे कार्य को तथाकथित रूप से बन्द करने की सांस ली ठीक उसी नाक के नीचे हमारा कार्य तो अब भी निर्विघ्न रूप से चल रहा है, बल्कि पहले से कहीं उत्तरदायित्वपूर्ण और निष्ठापूर्वक चल रहा है। मेरे प्रिय विरोधी! तुम्हारी दुराग्रहता कितनी हास्यास्पद है, तुम किसी का भी बाल बांका नहीं कर सकते हो।''

श्री क्षत्रिय युवक संघ का राजनीति से कोई सम्बन्ध नहीं। संघ राजनीति से हमेशा दूर रहा, कभी लगाव रहा भी नहीं। पूज्य श्री तनसिंहजी राजनीति में जरूर थे, लेकिन उन्होंने राजनीति का उपयोग एक साधन के रूप में संघ के लिए ही किया। फिर भी राजनैतिक क्षेत्र को लेकर श्री क्षत्रिय युवक संघ का विरोध किया गया। इस सम्बन्ध में अपने विरोधी को सम्बोधित करते हुए पूज्य श्री तनसिंहजी ने बताया-

''एक बार तुम्हारा विरोध राजनैतिक क्षेत्र में पैदा हुआ। राजनैतिक कार्यों से किसी प्रकार का हमारा सम्बन्ध न होते हुए भी उस क्षेत्र में तुम्हारी भिड़न्त हो गई, इसकी भी एक कहानी है। तुम एक राजा हो। तुम्हारा यह विचार है कि मनुष्य स्वभावत: स्वार्थी है और इस स्वार्थ से परे रहकर सोचना या कार्य करना मानव प्रकृति के प्रतिकूल बात है। तुम्हारा यह भी विचार है कि स्वार्थ सिद्धि के लिए कोई भी अपनाया गया तरीका अपने आप में निकृष्ट नहीं है। निकृष्ट होना केवल असफल होना ही है। इसी हेतु जमाने के प्रवाह को अपने स्वार्थ के लिए प्रयोग करने के लिए तुम स्वयं तुम्हारे विरोधी बने। तुमने समाजवाद का नकाब पहना। यह दुनिया का आठवां आश्चर्य है कि राजा भी समाजवाद की बात करता है। हमें तुम्हारी किसी कार्यवाही से कोई दिलचस्पी नहीं है। तुम कुछ भी करो इसकी हमें चिन्ता नहीं, केवल तुम हमें अपने भाग्य पर छोड़ दो। हम लोगों का भाग्य विधाता एक भगवान ही है। तुमने तो हमें शोषण के मोहरों के रूप में ही देखा है जिससे तुम्हारी राजनैतिक शतरंज चलती रहे। हो सकता है यह तुम्हारी गलतफहमी ही हो कि तुम हमारे भाग्य निर्माता हो, यद्यपि यह गलतफहमी हमारी भी मिट गई तो तुम्हारी तो हमसे भी पहले मिटनी चाहिए थी। फिर भी शायद इसी गलतफहमी के कारण तुम्हारा यह ख्याल है कि तुम जिस पत्थर को छू दोगे वही जीवित मूर्ति हो जाएगा। मेरे प्रिय विरोधी राजा! वे दिन गये जब खलील खाँ फाक्ता लड़ाया करते थे। हम तो तुम्हारे क्रोध के आगे चटनी बन सकते हैं और बने हैं परन्तु यह न भूलना कि एक समय की और चक्की है जिसमें तुम्हारे जैसों की चटनी बन जाए तो वह इतिहास की कोई अप्रत्याशित घटना नहीं होगी। तुम्हारे उम्मीदवार का विरोध हमारी शक्ति का परीक्षण कभी नहीं है और न इस इरादे से ही कोई काम किया गया किन्तु तुम जानते ही हो कि तुम्हारी पराजय के कारण हम नहीं- वह सत्य है जिससे तुम अब भी सबक ले सको तो लो। तुम्हारे स्वप्नों और हमारे स्वप्नों में बड़ा अन्तर है। तुम

(शेष पृष्ठ 23 पर)

गतांक से आगे

मेरी साधना

लेखक – पू. आयुवानसिंहजी, गुजराती भाष्य–श्री बलवंतसिंह पांची, हिन्दी अनुवाद–प्रोफेसर रूपसिंह लिम्बड़ी

अवतरण–61

मन मेरी साधना का विकट शत्रु है। वह मुझे सदैव एकाग्रता, संतोष, दृढता और कर्मठता के क्षेत्र से खदेड़ कर चंचलता, भय, प्रलोभन, फिसलन और निष्क्रियता के दलदल में ला पटकता है। मैं जब कभी छुटकारा पाना चाहता हूँ तब कल्पना के मादक जाल में फंसाकर वह मेरी क्रिया को ही निश्चेष्ट कर देता है और जब मैं झुंझलाकर उसे पकड़ना चाहता हूँ तब वह आँख मिचौनी–सी खेल कर एक सधे हुए अपराधी की भाँति मुझे धोखा दे जाता है।

मन के हारे हार है,
मन के जीते जीत।

यदि मन के आगे हम हार गये तो हम सब जगह हार जायेंगे। यदि मन को जीत लिया तो हम सब जगह जीत जायेंगे।

गत अवतरण में साधक ने रूप, रस, शब्द, स्पर्श, गंध आदि इन्द्रिय विषयों को महारिपु बताया है। अब यहाँ मन को साधना के क्षेत्र में विकट शत्रु कहा है। वैसे तो इस अवतरण में आध्यात्मिकता का संकेत है। मन एवं इन्द्रियों और इन्द्रियों के विषय आदि की चर्चा आध्यात्मिक विषय की चर्चा है। 'मेरी साधना' का साधक वैसे तो सामाजिक क्षेत्र का साधक है। परन्तु वास्तव में सामाजिक व्यक्ति और आध्यात्मिक व्यक्ति भिन्न नहीं हो सकता है। सामाजिक स्वास्थ्य का मूल आधार है आध्यात्मिकता। व्यक्ति के जीवन को सामाजिक और आध्यात्मिक ऐसे दो भागों में विभाजित नहीं किया जा सकता है। यह अवतरण आध्यात्मिक साधना के साधक को विशेष रूप से लागू होता है। मुझ जैसे साधारण व्यक्ति के लिए इस अवतरण के रहस्य को समझना और समझाना मुश्किल है। यदि कोई आध्यात्मिकता का साधक अनुभव के आधार पर इसकी चर्चा करे तो हम साधारण पाठक इसे समझ पाएँ। इस ग्रंथ में ऐसे आध्यात्मिकता के अवतरण आएंगे, मैं इनका भाष्य करने की क्षमता नहीं रखता हूँ, फिर भी अपनी अल्प मति से चर्चा इसीलिए करता हूँ कि अवतरणों की क्रमिकता का निर्वाह हो सके।

साधक मन को अपनी साधना का विकट शत्रु कहता है। मानव मन बड़ा विचित्र है। वह कहाँ–कहाँ दौड़ जाएगा यह निश्चित नहीं है। वह क्या करेगा, हमसे क्या करवाएगा यह निश्चित नहीं है। मन की शक्ति और गति अपार है। वह प्रमाणिक को अप्रमाणिक और अप्रमाणिक को प्रमाणिक बना देता है। वह उत्तम विचारों को हीन विचार की तरफ खींच लेता है। वह ऊर्ध्वगति भी करता है और अघोगति भी करता है। बहुधा वह निम्न स्तर की तरफ सरलता से गति करता है। मनुष्य की मुक्ति और बन्धन का मन कारण है।

यह मन कैसा विचित्र है? यह लुटेरे को ऋषि बना देता है (वाल्मीकि), डाकू को भक्त बना देता है (जैसल जाडेजा–कच्छ)। बस मन को संग उत्तम मिलना चाहिए। मन पानी जैसा है। पानी में जो भी रंग डाला जाए, उस रंग का पानी हो जाता है। मन भी वैसा ही है, जैसा संग। यदि उत्तम संत का संग हो जाए तो मोक्ष का कारण बन जाता है। यदि किसी अध:जन का संग हो जाए तो बन्धन में बांधने का कारण बन जाता है। 'मन एव मनुष्याणां कारण बन्धन मोक्षयो' मन के हारे हार है, मन के जीते जीत। यदि इस मन को वश में न किया जाए, संयम में न बांधा जाए, तो वह साधक का विकट शत्रु भी हो सकता है। मन की शक्ति अमाप है, परन्तु मन की शक्ति का उपयोग करने के लिए मन को वश में करना चाहिए। शत्रु मन, मित्र मन भी बन सकता है। इसलिए मन का संयमन

बहुत आवश्यक है। जब मन ममत्व में, मोह में, लाभ में फंस जाता है तब वह साधक का शत्रु बन जाता है।

व्यक्ति की मानसिकता जब समाज की मानसिकता बन जाती है तो मानसिकता के आधार पर समाज की उन्नति-अवन्निति हो जाती है। आज हमारी सामाजिक मानसिकता दुर्बल हो गयी है। हमारा सामाजिक मन थकान महसूस करने लगा है। अपनी पराजय स्वीकार कर चुका है। इसका प्रमाण यह है कि हम साहस और उत्साह रहित हो गये हैं। किसी भी सामुदायिक-सामाजिक उत्सव में हमें उत्साह नहीं दिखाई देता है और साहस की कोई प्रवृति हमें कर्म में प्रेरित नहीं करती है।

हमारी मन की दुर्बलता का प्रभाव हमारी संगठन शक्ति को भी प्रभावित कर रहा है। मन की चंचलता के कारण हमारी परस्पर की विश्वसनीयता भी कम हो गई है। इस अवतरण का हमारी सामाजिक दृष्टि से भी मूल्यांकन करना चाहिए।

गुजराती भाषा में एक लोकोक्ति है-'जैसा अन्न वैसा मन' मतलब हमारे आहार का हमारे मन पर प्रभाव पड़ता है। तामसिक और विकृत आहार से मन विकृत होता है। सात्विक आहार एवं संत जनों का, सज्जनों का संग मन की शुद्धि के लिए आवश्यक है। हमारे पूर्वज मन के अधिष्ठाता थे। आज मन हमारा अधिष्ठाता हो गया है। हमें अपने पूर्वजों की मन ही दृढ़ता से प्रेरणा लेकर मन को वश में करना है। हमारा मन शिव संकल्प करे। यही प्रार्थना है।

अर्क- विकट शत्रु मन को निकट मित्र बनाने का संकल्प करें।

चिंतन मोती-हम प्राणवान बनें। प्राण को वश में करके मन एवं इन्द्रियों को वश में करें। इन्दियों को अपने विषयों से दूर रखें।

अवतरण-62

मरुस्थल का उग्र आँचल, ग्रीष्माग्नि की असह्य फुफकारें, जल की अलभ्यता, शीतलता की असंभवता और पथ की लम्बाई-ये सब मिलकर मध्यान के समय मुझ तृषित, पीड़ित, थकित, क्षीण और झुलसित साधक के धैर्य की परीक्षा ले रहे हैं। क्या मैं उत्तीर्ण हो जाऊँगा, इस परीक्षा में? मरुभूमि के गर्भ से प्रसवित वे जल-उर्मियाँ ही तो दिखाई दे रही हैं,-जरा छोडूं पथ को और दोडूं उधर तृषा शान्त करने! ''नहीं''।

इस अवतरण में साधक ने मरुभूमि की प्राकृतिक स्थिति का वर्णन करके मरुभूमि के निवासियों की कैसे कसौटी होती है, इसका उदाहरण देकर क्षत्रिय युवक संघ की, प्रवृत्तियों में स्वयंसेवक की परीक्षा कैसे होती है यह बताने का प्रयत्न किया है।

सैंकड़ों मीलों में विस्तारित विशाल मरुभूमि का वर्णन दिया है। यहाँ ग्रीष्म ऋतु की गर्मी गर्म रेत को उड़ाते हुए वायु की तीव्र फुफकारें हैं। बस वैसे ही हमारे विस्तृत समाज में काम करते समय अनेक विघ्न आते हैं। जैसे मरुभूमि की यात्रा का पथ-मार्ग लम्बा है, मार्ग में न कहीं पेड़-पत्तों की छाया की संभावना है, न एक बूंद जल की। भूख-प्यास की पीड़ा सहते हुए यह लम्बा पथ काटना है। उसी प्रकार समाज के पुनरुत्थान का जो काम क्षत्रिय युवक संघ ने उठाया है, वह भी इतना ही कठिन है। काम करते-करते थक जाएँगे। झुलस जाएँगे। यह कार्य हमारे कार्यकर्ताओं की परीक्षा है। धैर्य की कसौटी है। कई बार मन ही मन प्रश्न उठता है-क्या सफलता मिलेगी?

ऐसे ही प्रसंग आते हैं, जैसे मरुभूमि में भ्रामक जल अपनी ओर खींचता है, उसी प्रकार संसार के प्रलोभन खींचते भी हैं। सांसारिक सुख भोग, मौज-मस्ती, विभिन्न भौतिक सुख भोग के प्रति लगाव होने भी लगता है, किन्तु प्रतिबद्ध साधक तुरन्त ही सावधान हो जाता है कि ये तो मरुभूमि के गर्भ से उत्पन्न जल तरंगें-लहरें हैं। इससे वास्तविक प्यास की तृप्ति नहीं होनी है। कच्चे साधक ही ऐसे प्रलोभनों में फंस जाते हैं लेकिन जो साधक विकट शत्रु-मन-को वश में करके आगे बढ रहा है, वह ऐसे प्रलोभनों में नहीं फंसता है। वह तो अपने आत्मबल के सहारे पूरी निष्ठा से अपना कर्तव्य कर रहा है।

क्षत्रिय युवक संघ की यह साधना वास्तव में कठिन साधना है। जब कोई इस कार्य में सम्मिलित होता है, तभी इन कठिनाइयों का ख्याल आता है। जिसमें कठिनाइयाँ सहन करने की शक्ति हो, हिम्मत हो, वही इस कार्य में सम्मिलित होता है और रहता है।

हम परमशक्ति से प्रार्थना करें कि सब में वह हिम्मत और शक्ति प्रदान करे, जिससे सब इस कार्य में लग जाएँ।

अवतरण–63

मध्य तमिस्रा के सघन अंधकार के वक्ष:स्थल को कुचलता हुआ ज्यों ही मैं साधना-पथ पर अग्रसर हुआ-भीषण मेघ-गर्जन, वेगवति उपलवृष्टि, पोषीय तरल पवन, वन की बीहड़ता, स्थान की भयंकरता, हिंसक जन्तुओं की गुर्राहट और वातावरण की वीभत्सता ने मुझे चारों ओर से घेर लिया। मैं हँस पड़ा,-पागल है यह दैव भी। क्या साधक इस प्रकार की बाधाओं से विचलित होते हैं! देवराज इन्द्र! निश्चिन्त रहो, मेरी साधना इन्द्रासन-प्राप्ति के लिए नहीं है।

भय, संकट, आफत, डर का नहीं पारावार।
साधक डिगे नहीं अपने पथ से साधना का आधार।।

जो भी अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए साधना के पथ पर चलना चाहता है, उसे इस अवतरण में वर्णित सभी परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है। संसार में जिसने भी मानव जाति के कल्याण के हेतु अपना जीवन समर्पित किया है, उसे विघ्नों से संघर्ष करना पड़ा है। इस अवतरण में प्राकृतिक विपत्तियों का जो वर्णन है, यह तो रूपक है। वास्तव में मध्य रात्रि का सघन अंधकार हमारी सामाजिक अज्ञानता का द्योतक है। अज्ञान और अंधश्रद्धा एवं जड़वादी-रूढिवादी भ्रामक परम्परा का पोषण करने वाला समाज का जो वर्ग है, वह अच्छी बातों का, समाज को सही राह दिखाने वालों का विरोध करेगा ही। जिस प्रकार हिंसक वन्य प्राणी दहाड़ते हैं, वन में विचरण करने वालों में भय पैदा करते हैं, वैसे ही साधक का विरोध करने वाले लोग भी साधक को साधना पथ से विचलित करने के लिये भय उत्पन्न करते ही रहेंगे। ऐसे लोगों को अपने नेतृत्व के छिन जाने का भय लगता है। इसलिए साधक ने इन्द्र का रूपक देकर कहा है कि आप घबराइये मत, मेरी साधना आपका पद प्राप्त करने के लिये नहीं है।

इतिहास बताता है कि जिस किसी ने समाज को अज्ञान एवं अन्ध श्रद्धा से मुक्त करने का प्रयत्न किया है, उसे इन सभी विघ्नों से लड़ना पड़ता है। जैसे स्वामी दयानन्द सरस्वती जी। स्व. पू. तनसिंहजी को भी समाज के ऐसे वर्ग की आलोचना को एवं टीका-टिप्पणी को सहन करना पड़ा था। सौराष्ट्र-गुजरात में भी कुमार श्री हरभमजी राज (मोरबी) का भी यही अनुभव रहा। स्व. श्री तनसिंहजी के गीत की पंक्ति में भी यही कहा है-'त्याग तप को युग से मिलती है सदा आलोचना'। समाज को अज्ञान के अन्धकार से प्रकाश की तरफ गति करवाने का कार्य दुष्कर है। इसके लिए बहुत ही उच्च कक्षा की साधना चाहिए। जिसमें समाज के मेणा-टोणा सहन करने की क्षमता है, वही यह कार्य कर सकता है।

अतवरण 61 में मन को विकट शत्रु दिखाकर फिर अवतरण 62 में राजस्थान की मरुभूमि में ग्रीष्म काल में यात्री को जिन प्राकृतिक प्रतिकूलताओं का मुकाबला करके भूख, प्यास, थकान को सहन करते हुए अपने धैर्य की कसौटी में सफलतापूर्वक उत्तीर्ण होना है; इस रूपक के माध्यम से साधक कैसे अपने पथ पर अडिग रहता है, यह बताया गया। पुन: इस अवतरण में भी प्राकृतिक प्रतिकूलता ही नहीं किन्तु डरावने-भयावह दृश्यों को माध्यम बनाकर समाज के लिए, सामाजिक पुनरुत्थान एवं समाज के हित के लिए काम करने वाले कार्यकर्ताओं को समाज के ही भीतर से उठने वाले विरोधी बवंडरों को भी सामना करना पड़ता है, यह बताने का प्रयत्न किया गया है।

साधक भौगोलिक परिस्थिति के संकटों को पार कर साधना क्षेत्र में आगे बढता है, तो फिर प्राकृतिक विपत्तियाँ अपना विकराल रूप धारण करके मार्ग में आ जाती हैं। फिर भी इससे तनिक भी बिना डरे वह हंसते-

हंसते आगे बढता है। वह खिलखिलाकर हंसते हुए कहता है-पागल है देव भी! क्या साधक इन विपत्तियों से डर जाएगा? जो डरता है वह साधक कैसा। साधक-साध्य और साधना क्या है? यह शब्दों के द्वारा नहीं समझाया जा सकता है, न समझ में आ सकता है। इसे समझने के लिए स्वयं साधक बनकर साधना-पथ पर चलना पड़ेगा।

विश्व के रचयिता ने विश्व की रचना कर दी। मानव सहित अनेक देहधारी जीवों की रचना कर दी। फिर प्रत्येक को अपने-अपने जीने के अधिकार के साथ अपने-अपने जीवन यापन की सुविधा के लिए नियमन की व्यवस्था कर दी। और नियंत्रण का उत्तरदायित्व मानव को दिया। फिर मानव समाज ने यह उत्तरदायित्व क्षत्रिय जाति को दिया, इस उत्तरदायित्व को क्षात्रधर्म कहा जाता है। क्षात्रधर्म का अर्थ है-संसार की दुष्प्रवृत्तियों का नियंत्रण रखना, उन्हें नष्ट करना और सद्प्रवृत्तियों का रक्षण करना, उन्हें बढ़ावा देना। दुष्टों को दण्ड देना और सज्जनों को पुरस्कृत करना क्षात्रधर्म है। संसर सृष्टि त्रिगुणात्मक है। संसार की प्रवृत्तियाँ तीन गुणों से प्रेरित होती है। वे गुण हैं-सत्व, रजस और तमस। इसमें रजस गुण है वह क्रिया प्रधान है। जब रजस में सत्व गुण का विशेष प्रमाण होता है, तब मनुष्य की सद्वृत्तियाँ बढ जाती हैं। जब रजस में तमस की प्रधानता होती है तो समाज में दुष्प्रवृतियाँ बढ जाती हैं। मानवों में क्षत्रिय रजस प्रधान जाति है। उसमें सत्व गुण मिलने से वह मानव जाति, पशु-पक्षी, सभी की रक्षा करता है। यही उसका स्वधर्म है। यही क्षत्रिय का परम कर्तव्य है।

आज क्षत्रिय अपने कर्तव्य से विमुख हो रहे हैं। उन पर प्रमाद की छाया पड़ गई है। अपने स्वधर्म के पालन एवं अपने कर्तव्य-बोध की प्रेरणा का स्रोत है 'मेरी साधना'। 'क्षत्रिय युवक संघ' का लक्ष्य सम्राटासन अर्थात् राजकीय सत्ता हासिल करने का नहीं है। इसका लक्ष्य है-क्षात्रधर्म पालन के लिये, अपने कर्तव्य कर्म के लिए क्षत्रिय जाग्रति हैं। सत्य, न्याय और नीति के लिये असत्य, अन्याय और अनीति के साथ संघर्ष करके समाज को सदाचार के लिए तैयार करना है। आज हम क्षत्रिय अपने स्वधर्म और अपने कर्तव्य पालन को अपने व्यवहार में लाना भूलते जा रहे हैं। क्षत्रिय को पुन: अपने स्वधर्म तथा कर्तव्य पालन के मार्ग पर लाने के लिये क्षत्रिय युवक संघ अपने युवाओं को तैयार कर रहा है।

'सुखों को जला के भी, सपने न टूटें, इसी पे हमें जिन्दगी है बितानी'

अपने सपनों को साकार करने के लिये अपने सुखों को हवी बनाने की परमात्मा हमें समझ एवं शक्ति प्रदान करें, यही प्रार्थना।

अर्क- निर्बल मन के मानव को मार्ग नहीं मिलता, अडिग (अचल) मन के मानव को हिमालय भी नहीं रोक सकता।

अवतरण-64

शत्रु-प्रदेश की व्यूह रचना है यह। प्रहरी सैनिकों की सतर्कता, गोली-वर्षा के अवसर, वायुयानों की दृष्टि और गुप्तचरों की गोपनीयता को धोखा देना है आज। गोली की मार, कारावास का भय, फाँसी का स्थल मेरी साधना भ्रष्ट करने में सफल नहीं हो सकते, इसलिये कि मेरी आत्मा का दृढ संकल्प ऐसी सम्भावनाओं को बहुत पहले ही विजय कर चुका है।

इस अवतरण का प्रथम वाक्य है-यह है शत्रु प्रदेश की व्यूह रचना। शत्रु अनेक प्रकार के हैं, परन्तु स्थानाभाव से यहाँ इसकी चर्चा नहीं करते हैं। परन्तु सभी शत्रुओं में एक बात निश्चित है। प्रत्येक शत्रु अपने प्रतिपक्ष पर विजय प्राप्त करना चाहता है और इसलिए वह अनेक प्रकार की व्यूह रचना करता है, जिससे अपना प्रतिपक्षी व्यूह में फंस जाए।

मेरी साधना का प्रधान उद्देश्य है एक महान जाति, जो गुमराह हो रही है, उसे उचित मार्ग पर लाकर उसे अपने कर्तव्य का बोध कराना। इस विचारधारा को समर्पित होकर, ध्येय निष्ठ, कर्तव्य परायण कार्यकर्ताओं को अपने कर्तव्य की पूर्ति करते हुए कितने प्रकार के विघ्नों का सामना करना पड़ता है, इसका चित्र विगत कुछ अवतरणों

में दिया गया है। इस अवतरण को पढने से मालूम होता है कि सन्निष्ठ कार्यकर्ताओं को पथभ्रष्ट करने के लिये कैसे-कैसे व्यूह रचे जाते हैं। साधक को अपने निर्धारित पथ पर चलते समय कैसे-कैसे संकटों से संघर्ष करना पड़ता है।

साधक को अपने मार्ग से हटाने के लिये शत्रु-पक्ष द्वारा चौकीदार सैनिक की सतर्कता, गोलियों की वर्षा, हवाई जहाज से रखी जाने वाली निगरानी, गुप्तचरों के द्वारा किया जा रहा गुप्त निरीक्षण इत्यादि को विफल बनाकर शत्रु की व्यूह रचना को भेदना है।

इस रूपक को 1955-56 के भूस्वामी आन्दोलन के संदर्भ में देखा जाए तो उस समय इस आन्दोलन का पूरा दौर-संचालन का उत्तरदायित्व प्रमुखतया पू. आयुवान सिंहजी, पू. तनसिंहजी आदि ने निभाया था। संभाला था। इस आन्दोलन को निष्फल बनाने के लिये शत्रु-पक्ष तत्कालीन सरकार ने अपनी कूटनीति से आन्दोलनकारियों में फूट डालने का भी प्रयोग किया, आन्दोलनकारियों पर लाठियाँ चलाई, गोली भी चलाई, कई कार्यकर्ताओं को कारावास में भी डाला, फिर भी आन्दोलन चलता रहा, सरकार की व्यूह रचना को विफल कर दिया गया था। सरकार ने साम-दाम-दण्ड और भेद की नीति का प्रयोग करके प्रलोभनों द्वारा, भय द्वारा आन्तरिक फूट पैदा करने का प्रयत्न भी किया था। परन्तु इस आन्दोलन के नेतृत्व ने अपनी ध्येयनिष्ठा एवं अपने मनोबल की दृढता का परिचय दिया था। लाठी, गोली तथा कारावास के भय के विरुद्ध अपने सामर्थ्य का परिचय दिया था।

जो विपत्तियों के भय से झुक जाए, अपने साधना पथ से डिग जाए, प्रलोभनों के वश में हो जाए, मृत्युदण्ड से अपना ध्येय छोड़ दे, वह कैसा साधक? इन सभी प्रकार के विघ्नों को पार करके अपने ध्येय में अटल रहे और अपने सपनों को साकार बनावे, वही सच्चा साधक है। ऐसे साधकों को तैयार करने की प्रयोगशाला है क्षत्रिय युवक संघ। परन्तु पात्र स्वयंसेवकों की कमी महसूस हो रही है, जिससे साधना की गति मंद है। इसकी गति को वेग देने के लिये, गति को तेज बनाने के लिए, समाज के लिए तन-मन-धन की कुर्बानी की भावना वाले युवाओं की आवश्यकता है। दुर्भाग्य से वर्तमान समाज की गति भोग विलास की तरफ होने से त्याग और बलिदान की भावना लुप्त होती जा रही है। क्षत्रिय युवक संघ की प्रयोगशाला में काम तो चल रहा है, परन्तु कच्चे माल की कमी से काम की गति मंद है। शुद्ध एवं उच्च कक्षा का गुणवत्तायुक्त कच्चा माल कम मिलने के कारण अपेक्षाकृत काम कम हो रहा है।

पू. तनसिंहजी एवं पू. आयुवानसिंहजी के तप-त्याग और बलिदान के कारण क्षत्रिय युवक संघ ठीक-ठाक चल रहा है। चलता भी रहेगा, क्षत्रिय समाज के गौरव, यश, कीर्ति की, ध्येय की पूर्ति करके समाज को नया दर्शन, नया प्रकाश देता रहेगा।

इस अवतरण की चर्चा में राजस्थान के भूस्वामी आन्दोलन का उल्लेख किया गया है, उसी प्रकार सौराष्ट्र में भी तत्कालीन सौराष्ट्र सरकार ने भूपत बहारवटिया को सहयोग देने का बहाना दिखाकर राजपूतों को विभिन्न आक्षेपों एवं कल्पित अपराधों से परेशान किया था। परन्तु राजपूतों ने अनेक प्रकार के नुकसान सहन करके अपनी खुमारी (दृढता) का परिचय दिया था। वह खुमारी पुनः हमारी नई पीढ़ी में जागृत हो, यही प्रभु से प्रार्थना।

अर्क- रजपूती मरी नहीं है, सो रही है। सोयी हुई रजपूती हो जगाना है।

(क्रमशः)

कर्माधर्मा हम अपने लक्ष्य में विफल होंगे और आहों व पछतावों में घिर जाएंगे लेकिन अगर हम जिन्दगी के इस खेल को यत्न से और खेल की भावना से खेलें तो हम पाएंगे कि सच्चा सुख वास्तव में यहीं विद्यमान है।

– ए. पी. परेरा

प्रभु की पीड़ा

– कैलाशपालसिंह इनायती

लो, पुण्यतिथि (7 दिसम्बर) के बाद जन्मतिथि (25 जनवरी) भी बड़े उत्साह और उमंग के साथ मना ली तुमने। मेरी प्रशंसा में समा बांध दी, तुमने। पता नहीं कितने ही विशेषण और अलंकारों से अलंकृत कर डाला मुझे। किसी ने श्री क्षत्रिय युवक संघ का संस्थापक बताते हुए मुझे महापुरुष कहा तो किसी ने समाज पुरुष। किसी ने कर्म योगी कहा तो किसी ने भक्त योगी और किसी ने ज्ञान योगी कहा मुझे।

वक्ता जहाँ एक ओर मेरी प्रशंसा में समा बांध रहे थे तो दूसरी ओर भावुक अन्दर ही अन्दर भावनाओं में बह रहे थे–''तनसिंह इन सबसे परे सूक्ष्मातीत सूक्ष्म भाव भी था जो किसी भी जीवन (वर्तमान, अतीत, भविष्य) में प्रवेश कर सकता था। साधक जीवन में प्रविष्ट होकर उसने साधक की समस्याओं को समझा और उन समस्याओं का समाधान 'साधक की समस्याएँ' पुस्तक लिखकर दिया। शिक्षक जीवन में प्रविष्ट होकर उसने शिक्षक की समस्याओं को समझा और 'शिक्षक की समस्याएँ' लिखकर उनका समाधान बताया। कभी वह दुर्गादास के जीवन में प्रविष्ट हो क्षिप्रा के तीर पर बोला, तो कभी चेतक (प्रताप का घोड़ा) के जीवन में प्रविष्ट होकर चेतक की समाधि पर बोला। कभी महाराणा सांगा के जीवन में प्रविष्ट हो मरण शय्या पड़े महाराणा सांगा के रूप में बोला तो कभी शक्तिसिंह के जीवन में प्रविष्ट होकर महाराणा प्रताप के पैरों में लेटते हुए और पश्चाताप के अश्रु बहाते हुए शक्तिसिंह के जीवन से बोला।''

मैं एक ओर खड़ा जहाँ वक्ताओं के प्रवचन सुन रहा था तो दूसरी ओर भावुक लोगों के चिन्तन को भी अनुभव कर रहा था। परन्तु यह सब कुछ जो मेरे जीवन से अनुभव किया गया, वह परिणाम था,–कारण नहीं। कारण तो जगत नियंता प्रभु की पीड़ा थी जो मुझे विरासत में मिली थी। पीड़ा–हाँ, पीड़ा। सच्चिदानन्द प्रभु भी एक पीड़ा से पीड़ित हैं और वह पीड़ा है–उसकी शरण में आये दीन–हीन शरणार्थियों की। जब परमात्मा ने इस सृष्टि पर प्राणी को भेजा तब उसने कहा था–'आव जो' (आना)। 'चंगा' (ठीक है) कहते हुए इन्सान ने भी परमात्मा से विदा ली। परन्तु इन्सान परमात्मा की ओर जाने वाले मार्ग से भटक गया। वह दिशा हीन होकर परमात्मा के लिए भटकने लगा।

जब यह सब कुछ मैंने देखा तो इन्सान की इस भटकन से मेरे भी पीड़ा उत्पन्न हुई और मैं इन्सान को सही राह दिखाने के लिए आगे बढा। कुछ ही आगे बढा कि मेरी एक टांग'एकचालुकानुवृति' के खिलाफ लड़खड़ाने लगी। देखा, टांग में असद् भाव प्रवेश कर गया है। मैंने आव देखा ना ताव, झट से उस टांग को काटकर फेंक दिया। बिना यह सोचे कि एक टांग के बलबूते पर कैसे मंजिल तक पहुँचा जा सकेगा। मुझे मेरे परमात्मा पर अटूट विश्वास था और यह विश्वास ही मेरा अंतत: सहारा था। 'एक चालुकानुवृत्ति' परमात्मा का सिद्धान्त है। इसी सिद्धान्त के सहारे यह सृष्टि उसके द्वारा संचालित है। परमात्मा के इस सिद्धान्त के हितार्थ मैंने अपनी एक टांग जो असद् भाव से ग्रसित हो चुकी थी, काटकर फेंक दी और एक टांग के सहारे मंजिल पर आगे बढना शुरू किया।

एक टांग के उपरान्त भी मेरी गति में अंशमात्र भी कमी न आ सकी और मैं निरंतर आगे बढता रहा। जीवन यात्रा की आधी दूरी ही तय कर पाया था कि मेरी एक भुजा में भी असद् भाव के कीटाणु घर कर गए और उस बाँह से राजनैतिक परक मवाद बहने लगी। मैंने उस भुजा को भी जड़ से उखाड़ कर ऐसे फेंक दिया जैसे माली अपने बाग से खरपतवार उखाड़ कर फेंक देता है। मेरा जीवन दूसरी बार फिर अपने ही खून से लथपथ हो गया। सब कुछ बिना कराहे सह लिया। क्योंकि, मुझे परमात्मा की ओर जाने वाली राह प्रिय थी, जो भटकते इन्सान को

बतानी थी। राजनैतिक परक असद् भाव परमात्मा की ओर ले जाने वाले 'साधना-पथ' के प्रतिकूल है। फिर स्वयं मेरी भुजा हुई तो क्या हुआ?

अब मैं एक टांग और एक भुजा के बलबूते आगे बढने लगा और आगे बढता गया। कोई यह नहीं कह सकता कि एक टांग और एक भुजा के होते हुए भी मेरी गति और संकल्प के क्रियान्वयन में किसी प्रकार की कमी आई थी। मैं खून से संधे जीवन से ही आगे बढता रहा और भटके इन्सान को राह बताता रहा। जीवन की संध्या के आते-आते तो मेरे कलेजे में भी असद् भाव के छाले उभर आए थे। परन्तु मैं हारा नहीं। कलेजे से उन छालों को भी अपने हाथों से फोड़-फोड़ कर साफ कर दिया और बाह्य जीवन के साथ-साथ जीवन का अंदरूनी भाग भी अपने ही खून से संध गया। पर मेरी यात्रा चंद क्षणों के लिए भी ठहरी नहीं। बस चलता रहा और चलता रहा।

बिना परिणाम की चिन्ता किये मैं कर्मक्षेत्र में जूझता रहा। जिन्होंने इस प्रकार कर्मस्थली में मुझे जूझते देखा, उन्होंने मुझे कर्मयोगी समझा। परन्तु यह परिणाम ही था, कारण नहीं। कभी भटकते इन्सान की खुशहाली के लिए और कभी असद् भाव से पीछा छुड़ाने के लिए भगवान को पुकारा, तो मुझे भक्त समझ लिया। यह भी एक परिणाम है, कारण नहीं। परमात्मा और उसकी राह के सम्बन्ध में कुछ बोला तो लोगों ने मुझे ज्ञानी समझ लिया। यह भी एक परिणाम है, कारण नहीं। दर्द से स्थूल जीवन सूक्ष्मातीत सूक्ष्म भाव में रूपान्तरित हो जाता है, जिसके परिणामस्वरूप वह हर घायल के दर्द को अनुभव कर लेता है। इसलिए यह भी एक परिणाम है, कारण नहीं।

कारण तो है, मेरा दर्द अथवा मेरी वह पीड़ा जिस पीड़ा से व्यथित होकर राम ने माता-पिता छोड़े, अयोध्या छोड़ी, राज प्रसाद के सुख छोड़े, बचपन के साथी-संगी छोड़े, तट के हरे-भरे मैदान छोड़े, बाग-बगीचे छोड़े और अंत में जनक दुलारी को भी छोड़ा। क्यों? इसलिए नहीं छोड़े कि राम को ये सब पसंद नहीं थे अथवा उसे छोड़ने का शौक था। बल्कि वह पीड़ा, जिस पीड़ा से व्यथित हो राम को यह सब कुछ छोड़ना पड़ा और वन में जाकर पृथ्वी को असुरहीन करने की शपथ लेनी पड़ी। हाँ, वही पीड़ा जिस पीड़ा से व्यथित हो कृष्ण ने कंस को मारा था। क्या कंस कृष्ण का मामा नहीं था? था, मामा था। परन्तु सद्संकल्प के क्रियान्वयन के लिए जहर भी पीना ही पड़ता है। यदि यह बात सही नहीं होती तो शिव जग हित जहर नहीं पीते।

यही तो बात थी। मैंने टांग इसलिए काट कर नहीं फेंकी थी कि वह मेरी नहीं थी अथवा उसका मुझसे कोई विरोध था। भुजा भी इसलिए उखाड़ कर नहीं फेंकी थी कि उसका मुझसे कोई विरोध था, अथवा वह मेरी नहीं थी। कारण था-मुझे परमेश्वर का सद्संकल्प प्रिय था और इसलिए असद् से ठनी थी। 'धर्म और अधर्म के बीच तटस्थता नाम की कोई वस्तु नहीं होती।' किसने सुने थे, मेरे ये बोल। सुने थे, बहुतों ने सुने थे। आज संसार में समन्वय वादियों का युग है, समझौतावादियों का युग है, तथाकथित समझदारों का युग है। भले ही हो, वर्तमान इनका है, तो भविष्य मेरे अपनों का। क्योंकि सद् सद् ही होता है और असद् असद् ही।

*

पीड़ा सुकृतियों की वह पाठशाला है जहाँ आत्म पीड़न से आत्मदर्शन प्राप्त होता है। यह मनुष्य की चंचलता को नियंत्रित करती है। इसके द्वारा अपराधवृत्ति का परिहार होता है। पीड़ा और प्रसन्नता, अंधकार और प्रकाश की भाँति एक दूसरे के पीछे चलते हैं।

– श्री प्रतापनारायण

<u>गतांक से आगे</u>

महान क्रांतिकारी–राव गोपालसिंह खरवा

– ले. सुरजनसिंह झाझड़, संकलन व सम्पादन–डॉ. भंवरसिंह भगवानपुरा

जन्म समय– रावगोपालसिंह का जन्म चूण्डावत राणी गुलाब कंवरजी के गर्भ से विक्रमी संवत 1930 काती बदी 11 गुरुवार तद्नुसार 19 अक्टूबर, 1873 ईस्वी को हुआ था। उस काल में उनके पिता माधोसिंहजी कुँवर पद पर थे। उनकी पत्नी चूण्डावत जी करेड़ा (मेवाड़) के राव भवानीसिंह की पुत्री थी। कुंवर गोपालसिंह बारह वर्ष की आयु में ही घुड़सवारी और बन्दूक चलाने में सिद्धहस्त हो चुके थे। साहस एवं निर्भीकता के वे पुंज थे। ये गुण उन्हें विरासत में मिले थे। अत: उनमें इनका सहज विकास स्वाभाविक था। उसी आयु में उन्हें शिक्षा हेतु अजमेर में मेयो कॉलेज में प्रवेश दिलाया गया। उससे पूर्व वयोवृद्ध पं. शिवलाल तिवाड़ी ने उन्हें घर पर ही अक्षर बोध कराया और धार्मिक आचार-विचारों की शिक्षा दी।

मेयो कॉलेज– इंग्लैण्ड की महारानी विक्टोरिया द्वारा भारत साम्राज्ञी की उपाधि एवं राजमुकुट धारण करने के बारह वर्ष पश्चात् राजपूताना के ए.जी.पी. कर्नल सी.के. एम वाल्टर ने राजपूताना के राजकुमारों की शिक्षा के लिये अजमेर में एक विशिष्ट एवं उच्च स्तरीय शिक्षण संस्थान स्थापित करने का सुझाव रखा। तत्कालीन ब्रिटिश सरकार ने उक्त सुझाव के महत्त्व को समझा। वायसराय लार्ड मेयो ने 22 अक्टूबर सन् 1870 ई. को अजमेर में आयोजित दरबार में उपस्थित महाराजाओं, राजाओं एवं सामन्त ठाकुरों के सामने उक्त योजना रखी और उनसे उक्त महान कार्य के निमित्त चंदा देने की पुरजोर अपील की। अन्त में सन् 1875 ई. में राजस्थान के हृदय स्थल अजमेर नगर में भव्य एवं विशाल शिक्षण संस्थान की स्थापना हुई।

वि.सं. 1942 (ई. 1885) में कुंवर गोपालसिंह को इसी ख्यातनाम संस्था मेयो कॉलेज में प्रवेश दिलाया गया। वहाँ वे 6 वर्ष ही अध्ययन कर पाये। 18 वर्ष की आयु में उन्होंने कॉलेज छोड़ दी। उनका विवाह उत्तरप्रदेश की शिवगढ़-रियासत के गौड़ राजा की राजपुत्री के साथ सम्पन्न हो चुका था। वि.सं. 1948 फाल्गुण कृष्णा 12 को उनकी माताराणी चूण्डावत जी का अल्पकालीन रुग्णता के पश्चात् देहान्त हो गया। बीमारी की अवस्था में अपनी माता के दर्शन करने का उन्हें अवसर नहीं मिला। माता की मृत्यु होने पर ही उन्हें मेयो कॉलेज अजमेर से खरवा बुला लिया गया।

घर से प्रस्थान– तेज एवं उग्र स्वभाव कुँवर गोपालसिंह मेयो कॉलेज की पढाई छोड़कर मंडावा (शेखावाटी) के ठाकुर अजीतसिंह के पास जयपुर चले गए। वे रिश्ते में कुंवर गोपालसिंह के फूंफा होते थे। मंडावा भवन जयपुर के अल्प कालिक निवास के समय नव युवा कुँवर गोपालसिंह ने एक रोज यहाँ पर आयोजित शेखावतों की एक मीटिंग का दृश्य देखा। समानता के उस अभूतपूर्व दृश्य को देखकर स्वतंत्र चेता कुँवर गोपालसिंह भाव विभोर हो उठा। समान बंधुत्व की उस अनूठी भावना ने उसके मन-मस्तिष्क को आन्दोलित कर डाला। खेतड़ी के राजा अजीतसिंह बहादुर को भाईयों के बीच बराबर बैठा देखा। जयपुर में गोपालसिंह अधिक समय तक नहीं रुक सके। वे अजमेर चले आए और बड़ली ठाकुर की हवेली में रहने लगे। फिर अजमेर में रहने के पश्चात् वि.सं. 1949 में अपनी पत्नी और सेवकों के साथ उन्होंने श्रीचारभुजा नाथ के दर्शनार्थ मेवाड़ में स्थित गढ भोरनाथ की यात्रा की।

जोधपुर जाने का निश्चय– वहीं पर उन्होंने जोधपुर जाने का निर्णय लिया। अपनी पत्नी-कुँवराणी गौड़जी को अपने विश्वस्त राजपूतों के साथ खरवा रवाना कर स्वयम् अकेले घोड़े की पीठ पर मेवाड़ से मारवाड़ की राजधानी जोधपुर के लिए चल पड़े। उनकी यह साहसिक अश्वयात्रा थी। चारभुजा से जोधपुर तक का यह अति लम्बा मार्ग उन्होंने केवल दो दिनों में ही पार कर लिया।

पहले दिन चार भुजानाथ गढ़भोर से प्रस्थान कर वे पाली पहुँचे। 90 मील का मार्ग एक दिन में पार किया तथा दूसरे दिन प्रात: पाली से चढ़कर सायंकाल वे जोधपुर पहुँच गये। राजस्थान के राठौड़ों की जोधपुर पितृ भूमि है। बीकानेर, किशनगढ़, रतलाम, झाबुआ, भिणाय, खरवा, मसूदा, पीसांगन आदि राज्यों और ठिकानों के शासकों के पुरखा जोधपुर राजघराने में ही जनमें भाई-बेटे थे, जिन्होंने अपने बाहुबल से इन अलग राज्यों और ठिकानों की स्थापना की थी। जोधपुर के महाराजा को इन समस्त राठौड़ों के मुखिया होने का गौरव प्राप्त है। जोधपुर में उस काल महाराजा जसवन्तसिंह (द्वितीय) शासनारूढ़ थे। उनके लघु भ्राता प्रतापसिंह रजवाड़ों एवं उच्च पदस्थ अंग्रेज अधिकारियों के मध्य अपने अनोखे और आकर्षक व्यक्तित्व के लिए प्रसिद्ध थे। वास्तव में सरप्रताप अनोखे व्यक्तित्व के धनी थे। वे खादी के समर्थक थे, राठौड़ रिसाले ''जोधपुर स्कवेड्रन'' के सैनिकों की वर्दी मारवाड़ में बनी खादी से ही बनाए जाने का निर्देश दे रखा था।

पाल के ठाकुर रणजीतसिंह शोभावत महाराजा के मरजीदान एवं शहर कोतवाल के विश्वस्त पद पर आसीन थे। महाराजा को पहलवानी करने एवं पहलवान रखने का भी शौक था। महाराजा उदार हृदय, वीर और गुणग्राहक नरेश थे। उनमें राजा की सी गौरव गरिमा थी। नन्हीं जान उनकी पासवान थी, महाराजा पर उसका असाधारण प्रभाव था। आर्य समाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द सरस्वती के जोधपुर आगमन पर महाराजा ने आँखें बिछाकर उनका स्वागत किया परन्तु उस विरक्त वीतराग संन्यासी ने ''शेरों के सिंहासन-पर कुतिया का राज'' की फटकार लगाकर महाराजा के स्वागत की उपेक्षा कर दी। उन्होंने निर्भीकता से महाराजा को राजा के पद की गरिमा और कर्तव्य का बोध कराया।

जोधपुर आगमन– जोधपुर राज दरबार के प्रेरणादायी उपर्युक्त वातावरण के अन्तिम काल में खरवा के कुँवर गोपालसिंह ने प्रवेश किया वि.सं. (1949)। महाराजा ने उन्हें स्नेह और यथोचित आदर के साथ अपने पास रखा। वे उन्हें 'खरवा कुँवर जी'' के आदर एवं स्नेह सूचक सम्बोधन से पुकारते थे। महाराजा की इच्छा उन्हें एक जागीर प्रदान करने की थी, परन्तु ऐसा नहीं हो सका कारण खरवा अंग्रेज शासित अजमेर प्रान्त का इस्तमरारी ठिकाना होने से जोधपुर राज्य से अलग है, अत: उन्हें जोधपुर राज्य में जागीर देना नीतिसंगत नहीं है।

पुन: खरवा आगमन– जोधपुर रहते समय वहाँ के वातावरण का कुँ. गोपालसिंह के चरित्र निर्माण पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा। वि.सं. 1952 में उन्हें अचानक खरवा जाना पड़ा। उसी÷अन्तराल में कुँ. गोपालसिंह के आश्रयदाता महाराजा जसवन्तसिंह का वि.सं. (1952) कार्तिक कृष्णा 8 (सन् 1895 ई.) को स्वर्गवास हो गया। इसके साथ कुँ. गोपालसिंह का जोधपुर का प्रवासकाल भी समाप्त हुआ एवं वे अजमेर में ही मकान लेकर रहने लगे। अंग्रेजों ने अपने देश में प्रचलित नियमों के अनुसार भारतवर्ष में भी बड़े से बड़े जघन्य अपराध के निर्णय और सजा के लिए न्यायालयों की सृष्टि की थी। बड़े से बड़े व्यक्ति को भी कानून हाथ में लेने का अधिकार नहीं था।

राव गोपालसिंह गद्दीनशीन– अपनी पत्नी राणी चुण्डावत जी की मृत्यु के पश्चात् राव माधोसिंह अस्वस्थ एवं दुर्बल होते जा रहे थे। वि.सं. 1955 कातिर्क कृष्णा 9 (16 अक्टूबर, 1897 ई.) को उनकी इह लीला समाप्त हुई। पिता की मृत्यु के पश्चात् गोपालसिंह खरवा के शासनधिकारी बने।

छपना अकाल– राव गोपालसिंह के गद्दी नशीनी के पश्चात् आने वाला अगला वर्ष वि.सं. 1956 समस्त राजपूताना के लिये कालरात्रि बनकर सामने आया। सं. 1956 में राजस्थान के अधिकांश भागों में वर्षा की बूँद भी नहीं गिरी। प्रदेश में घोर दुर्भिक्ष छा गया। अन्न बिना मनुष्य और चारे बिना पशु मरने लगे। जयपुर, जोधपुर और बीकानेर के महाराजाओं ने भूख से पीड़ित जनता के लिए स्थान-स्थान पर सदाव्रत खोल दिए। अकाल का प्रकोप बीकानेर, जैसलमेर और जोधपुर राज्यों पर अधिक था। अकाल में मुफ्त खाना बांटने का प्रबन्ध कराया गया। उस काल में यातायात एवं संचार साधनों के अभाव में उक्त सहायता का लाभ अधिकांश अकाल पीड़ित जनता को नहीं मिल सका। **(शेष पृष्ठ 34 पर)**

राजा चक्कवेण के त्याग का प्रभाव

– श्री जयदयाल गोयन्दका

राजा चक्कवेण की कहानी कहीं किसी पुस्तक में तो मैंने नहीं देखी है; परम्परा से लोकविख्यात है। यह चक्कवेण का इतिहास वास्तविक है या काल्पनिक, मुझको पता नहीं। जो भी कुछ हो, हमें तो इससे शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये। वह कहानी इस प्रकार है–

एक समय चक्कवेण नाम के एक राजा हुए थे। वे बड़े ही सद्गुण-सदाचार सम्पन्न, धर्मात्मा, सत्यवादी, स्वावलम्बी, अध्यवसायशील, त्यागी, विरक्त, ज्ञानी, भक्त, तेजस्वी, तपस्वी और उच्च कोटि के अनुभवी महापुरुष थे। वे राज्य के द्रव्य को दूषित समझकर उसे स्वयं अपने और अपनी पत्नी के काम में नहीं लाते थे। प्रजा से जो कुछ 'कर' लिया जाता था, वह सारा-का-सारा प्रजा की ही सेवा में लगा दिया जाता था। राज्य का कार्य वे निरभिमानपूर्वक निष्काम-भाव, तन-मन से किया करते थे। प्रजा पर उनका बड़ा प्रभाव था। रामराज्य की भाँति उनके राज्य में कोई दुखी नहीं था, सभी सब प्रकार से सुखी थे।

वे अपने शरीर निर्वाह के लिये पृथक् खेती किया करते थे। स्वयं रानी बैल के स्थान में हल खींचा करती और वे बीज बोया करते। वे अपने ही खेत में उपजे हुए अन्न से अपना भरण-पोषण करते थे। वे गन्ना, रूई, अनाज, फल और शाक की खेती किया करते थे। अपने खेत में उपजी हुई रूई का ही वस्त्र बनाकर पहनते, अपने खेत में उपजे हुए गन्नों का ही गुड़ बनाकर खाते और अपने खेत में उपजे हुए अन्न, फल, शाक को ही भोजन के काम में लाते थे। उनकी पत्नी के कोई भी आभूषण नहीं थे; क्योंकि वे राज्य के द्रव्य से तो आभूषण बनाते नहीं और अपनी की हुई खेती की उपज से केवल सादगी से खाने-पहनने का काम भर चलता था। खेती के सिवा उन्हें राज्य के कार्यों में भी तो समय देना पड़ता था। उनका जीवन एक सीधे-सादे सदाचारी किसान के जैसा था। छ: घंटे शयन के सिवा उनका सारा समय ईश्वरभक्ति, परोपकार, राज्यकार्य और कृषि के कामों में ही बीतता था। उनका सब जीवों के प्रति समता, दया और प्रेम का भाव समान था। वे सब प्राणियों को परमात्मा का स्वरूप मानकर सबकी निष्काम प्रेमभाव से सेवा करते थे। वे स्वावलम्बी थे; अपने शरीर का काम स्वयं ही करते थे। किसी राज्य कर्मचारी या नौकर आदि से नहीं कराते थे। वे जो कुछ भी कार्य करते, आसक्ति और अहंकार से रहित होकर बड़े ही उत्साह और धैर्य से किया करते।

एक दिन की बात है। जिस देश में राजा चक्कवेण रहते थे, वहाँ एक बड़ा भारी मेला लगा। उसमें नगर के अन्यान्य, प्रान्तों के लोग बड़ी भारी संख्या में इकट्ठे हुए। राजा-रानी के दर्शन के लिये यों तो बराबर ही लोग आते रहते, पर मेले के कारण नर-नारियों की भीड़ कुछ अधिक रहती थी। राजा के पास अधिकतर पुरुष आते और रानी के पास अधिकतर स्त्रियाँ आया करती थीं। एक दिन बहुत-से गहनों और रेशमी वस्त्रों से सजी-धजी अनेक दासियों से घिरी हुई बहुत-सी धनी व्यापारियों की स्त्रियाँ रानी का दर्शन करने के लिये उनके पास आयीं। उन स्त्रियों ने कहा-'रानीजी! आपके-जैसे वस्त्र तो हमारी मजदूरनियाँ भी नहीं पहनती आप हमारी दासियों को देखिये, कैसे वस्त्राभूषण पहने हैं। आपके स्वामी बड़े सम्राट हैं, आप उनसे थोड़ा-सा भी संकेत कर देंगी तो वे आपके लिये हम लोगों से बढ़कर वस्त्राभूषण की व्यवस्था कर देंगे। आप हमारी स्वामिनी हैं, इसलिये हमें आपको इस वेश में देखकर दु:ख होता है। ऐसे वस्त्र तो भीख माँगने वाली भिखारिन भी पहनना नहीं चाहती। एक सम्राट की महारानी के जैसे वस्त्राभूषण होने चाहिये, हम उसी रूप में आपको देखना चाहती हैं।' इस प्रकार कहकर वे अपना प्रभाव डालकर चली गयीं। रानी के चित्त पर उनकी बातों का बड़ा असर पड़ा।

रात्रि में जब महाराज आये, तब रानी ने सब घटना उनको सुनायी और दिन में जो कुछ धनी व्यापारियों की स्त्रियों ने कहा था, सब राजा से निवेदन किया एवं उनसे अनुरोध किया कि मेरे पहनने के लिये बहुमूल्य वस्त्र और भूषण मंगा दीजिये। राजा ने उत्तर दिया–'कैसे मँगा दूं? व्यवहार में लाना तो दूर रहा, मैं राज्य के पैसों को छूता भी नहीं, उससे बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है।' रानी भी बहुत उच्च कोटि की पवित्र स्त्री थी, किन्तु वस्त्राभूषणों से सजी–धजी धनिकों की स्त्रियों का उन पर काफी असर पड़ चुका था, अत: रानी ने कहा–'चाहे जैसे भी हो, आप सम्राट हैं और मैं आपकी पटरानी हूँ! मेरे लिये तो एक सम्राट की पटरानी के योग्य बहुमूल्य वस्त्राभूषण मँगाने की कृपा आपको करनी ही होगी। पत्नी की प्रीति से प्रेरित राजा ने सोचा–'रानी कितना भी आग्रह क्यों न करें, मैं राज्य के द्रव्य को तो किसी भी हालत में उपयोग में ला नहीं सकता, किन्तु मैं सम्राट हूँ; दुष्ट, अत्याचारी और बलवान राजाओं से 'कर' ले सकता हूँ।' यह सोचकर उन्होंने पर–राष्ट्रों तथा अधीनस्थ राज्यों के कार्य का सम्पादन करने वाले मंत्री को बुलाया और कहा–'मंत्री! आप राक्षसराज रावण के पास जाइये और कहिये कि राजा चक्कवेण की ओर से मैं आया हूँ, उन्होंने मुझे आपसे 'कर' के रूप में सवा मन सोना प्राप्त करने के लिये आपके पास भेजा है।'

सम्राट की आज्ञा से मंत्री कुछ आदमियों को रथ में बैठाकर समुद्र के किनारे पहुँचे और फिर जलयान के द्वारा समुद्र के उस पार पहुँचकर लंका में प्रवेश किया तथा राजसभा में जाकर बड़ी नम्रता और सभ्यता के साथ सम्राट चक्कवेण का संदेश सुनाया। संदेश को सुनते ही रावण हँसा और उसने सभासदों से कहा–'देखो, ऐसे मूर्ख राजा भी संसार में अभी हैं, जो ऋषि, देवता, राक्षस आदि सभी से 'कर' लेने वाले मुझ–जैसे बलवान सर्वतंत्र–स्वतंत्र महान सम्राट से भी कर की आशा रखते हैं!' उन्होंने राजा चक्कवेण के दूत को कैद करना चाहा, किन्तु सभासदों के अनुरोध करने पर उसे छोड़ दिया। वह रावण की सभा से उठकर समुद्र के किनारे लौट आया।

तदनन्तर रावण जब रात्रि में मन्दोदरी के पास महल में गया, तब रावण ने हँसकर मन्दोदरी से विनोद करते हुए कहा–'कोई एक भारतवर्ष में चक्कवेण नाम का राजा है। आज उसका एक दूत सभा में आया था और उसने मुझसे सवा मन स्वर्ण 'कर' के रूप में देने को कहा। मुझे इस पर बड़ी हँसी आयी। देखो, संसार में ऐसे मूर्ख भी अभी तक जीते हैं जो मुझ–जैसे सब से कर लेने वाले से भी कर लेने की आशा रखते हैं! मैं तो उसके दूत को कैद करना चाहता था, पर सभासदों के अनुरोध से उसे छोड़ दिया।' मन्दोदरी ने दु:ख प्रकट करते हुए कहा–'स्वामिन्! आपने बहुत बुरा किया। चक्कवेण को मैं जानती हूँ, वे सत्यवादी और धर्मात्मा राजा है। उनका चक्र चलता है। जो उनकी आज्ञा का पालन नहीं करता, उसका अनिष्ट हो जाता है। उस दूत को संतोष कराकर ही आपको उसे भेजना चाहिये था। उसका पता लगाकर अब भी उसको संतोष करा दें, नहीं तो, पता नहीं, हमारा कितना अनिष्ट हो जाएगा।' रावण बोला–'तू बड़ी डरपोक है, मामूली मनुष्य–राजाओं से तू इतना भय करती है, मैं इसकी कुछ भी परवाह नहीं करता।' रानी ने कहा–'कल प्रात:काल मैं आपको चक्कवेण का प्रभाव दिखाऊँगी।' प्रात: होते ही राजा के साथ मन्दोदरी महल के छत पर गयी, जहाँ वह रोज कबूतरों को अनाज डाला करती थी। अनाज चुगने वहाँ बहुत से कबूतर आया करते। मन्दोदरी ने दाने चुगते हुए पक्षियों से कहा–'राजा रावण की दुहाई है, खरबदार! दाने न चुगना।' किन्तु वे चुगते ही रहे। फिर रानी ने राजा से कहा–'देखिये, आपके सम्मुख और आपकी दुहाई देने पर भी ये सब दाने चुगते ही रहे।' रावण ने कहा–'मूर्ख! ये पक्षी बेचारे क्या समझें!' मन्दोदरी बोली–'अब आप राजा चक्कवेण के प्रभाव को देखिये।' फिर उसने पक्षियों से कहा–'सावधान! चक्कवेण की दुहाई है, कोई दाने न चुगना।' इतना सुनते ही सब पक्षियों ने एक साथ दाने चुगने बंद कर दिये। उनमें से एक कबूतर बहिरा था, वह कुछ भी सुन नहीं पाता था; अत: उसने दाना उठा लिया। ज्यों ही उसने दाना उठाया, त्यों ही उसकी गर्दन टूटकर

गिर गयी। रानी ने रावण से कहा–'देखिये, राजा चक्कवेण की दुहाई पर सब ने दाने चुगने बंद कर दिये, एक बहिरे कबूतर ने न सुनने के कारण दाना उठा लिया, जिससे चक्कवेण के चक्र से उसका मस्तक कटकर गिर गया।' फिर रानी पक्षियों से बोली–'अब मैं चक्कवेण की दुहाई हटा लेती हूँ, अब दाने चुगो।' तुरन्त सब पक्षी दाने चुगने लगे। रानी ने फिर कहा–'जो तुम्हारे सम्मुख, खड़े हैं, उन राजा रावण की दुहाई है, कोई भी दाने न चुगना।' किन्तु राजा रावण के सामने रहते हुए भी किसी ने परवाह न की और दाने चुगते ही रहे। मन्दोदरी ने रावण से कहा–'देखिये, आपका इन पक्षियों पर कुछ भी असर नहीं होता, परन्तु राजा चक्कवेण के प्रभाव पर विचार कीजिये, उनके सामने न रहते हुए भी उनका कितना असर है; रावण ने कहा–'मालूम होता है तुम्हारी इसमें कोई माया है। नहीं तो, ये पक्षी बेचारे क्या समझें।' ऐसा कहकर रावण टालमटोल करके राजसभा में चला गया।

इधर, राजा चक्कवेण के मंत्री ने समुद्र के किनारे एक नकली लंका की रचना की। उसने कज्जल के समान अत्यन्त महीन मिट्टी को समुद्र के जल में घोलकर रबड़ी की तरह बना लिया तथा तट की जगह को चौरस बनाकर उस पर उस मिट्टी से एक छोटे आकार में नकली लंका की रचना की। धुली हुई मिट्टी की बूंदों को टपका-टपकाकर उसी से लंका के परकोटे, बुर्ज और दरवाजों आदि की रचना की। परकोटे के चारों ओर कँगूरे भी काटे गये एवं उस परकोटे के भीतर लंका की राजधानी और नगर के प्रसिद्ध बड़े-बड़े मकानों को भी छोटे आकार में रचना करके दिखाया गया। इन सबकी रचना करने के बाद वह पुन: रावण की सभा में गया। उसे देखकर रावण चौंक उठा और उससे बोला–'क्यों जी! तुम फिर यहाँ किसलिये आये हो?' उसने कहा–'मैं आपको एक कौतूहल दिखलाना चाहता हूँ। आप मेरे साथ समुद्र तट पर चलिये।' रावण कौतूहल देखने को उत्सुक हो गया और कुछ सभासदों को साथ लेकर समुद्र तट पर गया, जहाँ उस मंत्री ने छोटे आकार में नकली लंका की रचना की थी।

उसने रावण से पूछा–'देखिये, वह ठीक-ठीक आपकी लंका की नकल है न!' रावण ने उसकी अद्भुत कारीगरी देखी और कहा–'ठीक है; क्या यही दिखाने के लिये मुझे यहाँ लाये थे?' मंत्री बोला–'नहीं-नहीं, इस लंका से आपको मैं एक कौतूहल दिखाता हूँ। देखिये, लंका के पूर्व का परकोटा, दरवाजा, बुर्ज और कँगूरे साफ-साफ ज्यों-के-त्यों दीख रहे हैं न?' रावण ने कहा–'दीख रहे हैं।' मंत्री ने कहा–'मेरी रची हुई लंका के पूर्व द्वार के कँगूरों को मैं राजा चक्कवेण की दुहाई देकर गिराता हूँ, इसके साथ ही आप अपनी लंका के पूर्व द्वार के कँगूरे गिरते हुए देखेंगे।' इतना कहकर मंत्री ने 'राजा चक्कवेण की दुहाई है' कहकर अपनी रची लंका के पूर्व द्वार के कँगूरे गिरा दिये। उनके गिरने के साथ-साथ ही रावण को असली लंका के पूर्व द्वार के कँगूरे गिरते हुए दिखायी दिये। यह देखकर रावण को बड़ा आश्चर्य हुआ। इसके बाद दूत ने कहा–'अब मैं अपनी रची हुई लंका के पूर्व के परकोटे के द्वार के आस-पास की चारों बुर्जे मिटाता हूँ, इसके साथ-साथ आप अपनी असली लंका की बुर्जों को भी मिटती हुई देखेंगे।' यह कहकर उसने चक्कवेण की दुहाई देकर अपनी बनायी मिट्टी की लंका की बुर्जे मिटा दीं, उसके साथ ही रावण की असली लंका के पूर्व द्वार की बुर्जे भी चकनाचूर होकर नष्ट हो गई। यह देखकर रावण को बहुत ही आश्चर्य हुआ और उसे मन्दोदरी की कही हुई बात याद आ गयी।

तदनन्तर राजा चक्कवेण के मंत्री ने कहा–'राजन्! आप यदि सवा मन सोना 'कर' के रूप में नहीं देंगे तो भी राजा चक्कवेण को आपसे युद्ध करने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। राजा चक्कवेण के प्रभाव का चक्र चलता है। मैं अकेले ही आपकी लंका को नष्ट-भ्रष्ट करने के लिये काफी हूँ। अभी राजा चक्कवेण की दुहाई देकर आपकी लंका को क्षणमात्र में एक हाथ के झटके से नष्ट किये देता हूँ। आप उस लंका की रक्षा कर सकें तो करें। यदि आपको लंका की रक्षा करनी है तो 'कर' के रूप में सवा मन सोना दे दीजिये; इसके सिवा और कोई उपाय नहीं है।' रावण ने सोचा–'मेरे देखते-देखते क्षणमात्र में पूर्व द्वार

के कँगूरे और चारों बुर्जे गिर गयीं, जो धातु-निर्मित और बहुत ही मजबूत थी। इसी प्रकार इस सारी लंका को नष्ट करना इसके बायें हाथ का खेल है।' यह सोचकर रावण ने सवा मन सोना 'कर' के रूप में देना स्वीकार कर लिया और मंत्री से कहा-'चलो, मैं आपको सवा मन सोना दे देता हूँ।' तत्पश्चात् उसे सवा मन सोना देकर विदा किया।

मंत्री सवा मन सोना लेकर राजा चक्कवेण के पास वापस लौट आया। उसने राजा-रानी के पास जाकर उनके सामने सवा मन सोना रख दिया और कहा-'आपकी आज्ञा से रावण से 'कर' के रूप में सवा मन सोना ले आया हूँ।' राजा के यह पूछने पर कि 'तुमने यह सोना कैसे प्राप्त किया!' उसने आद्योपरान्त सारी घटना उनको कह सुनायी।

यह घटना सुनकर रानी को बड़ा आश्चर्य हुआ और उस पर इसका बड़ा प्रभाव पड़ा। उसने राजा से पूछा-'यह क्या बात है!' राजा ने कहा-'हम लोग स्वावलम्बी होकर परिश्रमपूर्वक खेती करके अपना निर्वाह करते हुए वैराग्य और त्यागपूर्वक अपना जीवन बिताते हैं और निष्कामभाव से प्रजा के धन को प्रजा की सेवा में ही लगा देते हैं, अपने व्यक्तिगत कार्य के लिये राज्य के पैसे को छूते तक भी नहीं, इसी का यह प्रभाव है।'

यह सुनकर रानी का दिल बदल गया। रानी बोली-'स्वामिन्! मैं बहुमूल्य वस्त्राभूषण नहीं पहनूंगी। जिस प्रकार अब तक नियम से रहती आयी हूँ, वैसे ही रहूंगी, कुछ भी परिवर्तन नहीं करूंगी। धनी व्यवसायियों की स्त्रियों के कुसंग से मेरी बुद्धि त्याग-वैराग्य और धर्म से विचलित हो गयी थी, किन्तु अब उनके संग का मुझ पर कोई असर नहीं रह गया है। मैंने आपसे जो कुछ दुराग्रह किया, उसके लिये मैं क्षमा-प्रार्थना करती हूँ। मेरे अपराध को आप क्षमा करें और इस स्वर्ण को वापस लौटा दें।'

राजा ने उसकी बात मानकर मंत्री से कहा कि-'मंत्री! इस पर जो कुसंग का असर पड़ा था, वह ईश्वर की कृपा से दूर हो गया है। अब इस धन को जहाँ से तुम लाये थे, वहीं वापस कर दो।' राजा की आज्ञा होते ही मंत्री वह स्वर्ण लेकर लंकापति रावण के पास पुन: गया और सभा में जाकर बोला-'महाराज चक्कवेण ने आपका यह स्वर्ण वापस लौटा दिया है। उनकी पत्नी की जो बहुमूल्य वस्त्राभूषण पहनने की अभिलाषा हो गयी थी, वह भगवत्कृपा से अब नहीं रही। अत: अब इसकी उन्हें आवश्यकता नहीं है।'

इस बात को सुनकर रावण के हृदय पर चक्कवेण के त्याग का और भी अधिक असर पड़ा। उसने वह स्वर्ण रखकर मंत्री को बहुत ही आदर-सत्कारपूर्वक विदा किया। मंत्री ने वापस आकर राजा-रानी को स्वर्ण लौटा देने का सब हाल सुना दिया। दूत की बात सुनकर राजा-रानी को बहुत ही प्रसन्नता हुई। राजा चक्कवेण का प्रभाव यक्ष, राक्षस, देवता, मनुष्य, ऋषि, मुनि, पशु, पक्षी आदि सभी पर था।

इस कहानी से हम लोगों को यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये- प्रत्येक स्त्री-पुरुष को निष्कामभाव से अपने-अपने वर्णाश्रम-धर्म के अनुसार न्याय और सत्यतापूर्वक अपनी जीविका चलानी चाहिये। दूसरों के आश्रित होकर अपना जीवन-निर्वाह करना भी अपने लिये घृणास्पद है। झूठ, कपट, बेईमानी करके उपार्जित द्रव्य से हमें यदि मेवा-मिष्ठान भी मिल जाएँ तो वे हमारे लिये विष के समान हैं, किन्तु अपने न्यायोपार्जित पवित्र द्रव्य से एक मुट्ठी चने भी खाने को मिलें तो वे हमारे लिये अमृत के समान हैं। हमें बीमारी और आपत्तिकाल के अतिरिक्त-नौकर-चाकर, स्त्री-पुरुष और शिष्य आदि के रहते हुए भी अपने शरीर का काम जहाँ तक हो सके, स्वयं ही करने का अभ्यास डालना चाहिये, जिससे कि हमें दूसरों के अधीन होकर जीना न पड़े। कल्याणकारी पुरुषों के लिये दूसरों के आश्रित होकर जीना लज्जास्पद है।

साथ ही, हमें समय को अमूल्य समझकर एक क्षण भी व्यर्थ नहीं बिताना चाहिये। हर समय भगवान को याद रखते हुए परोपकार और शरीर-निर्वाह आदि का कार्य करते रहना चाहिये। छ: घंटे सोने के अतिरिक्त एक क्षण भी न तो समय व्यर्थ बिताना चाहिये और न उसका

दुरुपयोग करना चाहिये। मनुष्य का जीवन बड़ा ही मूल्यवान है। अतः क्षणमात्र भी निकम्मा नहीं रहना चाहिये, अपनी बुद्धि से हम जिसको सब से बढ़कर कार्य समझें, उसी कार्य को करते रहना चाहिये।

थोड़ी देर का कुसंग भी मनुष्य के लिये बहुत हानिकारक हो जाता है-इस बात को ध्यान में रखकर नास्तिक, नीच, प्रमादी, भोगी, पापी, निकम्मे, आलसी, दूसरों पर निर्भर रहकर जीवन-निर्वाह करने वाले, बहुमूल्य वस्त्राभूषण धारण करने वाले, खेल-तमाशा और मादक वस्तुओं का सेवन करने वाले दुर्व्यसनी स्त्री या पुरुषों का कभी भूलकर क्षणमात्र भी संग नहीं करना चाहिये और प्रमाद, आलस्य, निद्रा, भय, उद्वेग, राग, द्वेष, अहंकार और दुर्व्यसन आदि से रहित होकर अपना जीवन विवेक, वैराग्य, त्याग और संयमपूर्वक निष्कामभाव से भजन-ध्यान, सत्संग-स्वाध्याय में ही बिताना चाहिये तथा संपूर्ण प्राणीमात्र को परमात्मा का स्वरूप समझकर, आसक्ति और अहंकार से रहित होकर निष्कामभावपूर्वक तन-मन से सबकी सेवा करनी चाहिये एवं सब पर समान भाव से हेतु रहित दया और प्रेम रखना चाहिये।

✲

पृष्ठ 9 का शेष

पूज्य श्री तनसिंहजी.......

भिखारी हो किन्तु तुम्हारी यह भ्रान्ति अभी तक नहीं मिटी है कि तुम राजा हो और इधर हमें बहुत पहले ही स्पष्ट हो चुका है कि हम राजा नहीं हैं। भगवान के नाम पर यदि तुम हमें हमारे भाग्य पर छोड़ दो तो अब भी हमारी इस कौम में इतनी ताकत है कि वह अपने पैरों पर खड़ी हो जाये। लेकिन तुम उसके पैरों में एक ऐसी लोह श्रृंखला हो जो पैरों को पंगु बनाकर रहेगी।

''विरोध को देखकर तुमने एक जीप और कुछ किराये के कोलम्बस इस खोज के लिए रवाना किये कि संघ कार्यकर्ताओं को किस प्रकार और कहाँ समाप्त किया जाए। तुम्हारे कोलम्बस अमेरिका की खोज कर सकते हैं, किन्तु खानाबदोसों को कोई क्या खोज निकालेगा और हम संघ कार्यकर्ताओं को कोई क्या नेस्तनाबूद करेगा। लेकिन तुम्हारे विरोध में मैं इतिहासक्रम के विकासवाद की एक आशाप्रद घटना को देख रहा हूँ और वह यही है कि तुम्हारा विरोध ही तुम्हें समाप्त करेगा। बुरा न मानो तो तुम अपने बल को जरूर आजमाओ और हमारी यह विनम्र चुनौती है, तुम्हें अपनी शक्तियों का अवश्य प्रयोग करना चाहिये क्योंकि इस तरीके से तुम हमारा ज्यादा लाभ कर सकते हो।''

एक अच्छी विचारधारा का जब विरोध होने लगता है, तो कोई भी इसे देख दंग रह जाता है कि ऐसा किन कारणों से हो रहा है? मानव मात्र के कल्याण का सोच रखने वाले श्री क्षत्रिय युवक संघ की विचारधारा का जब विरोध होने लगा तो बिना कोई कारण विरोध होते देख सभी दंग रह गये। इस विरोध के सम्बन्ध में पूज्य श्री तनसिंहजी ने कहा-

''बहुत विचार करने पर भी तुम्हारे विरोध का कारण मेरी समझ में नहीं आता। हमने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था। हम तो तुम्हारे सामने मक्खी के समान थे और तुम उस समय हाथी से भी अधिक बलवान थे। क्या कारण था कि मक्खी जैसी नगण्य हस्ती को मिटाने के लिये गजराज क्रोधित होकर अपनी शक्तियों को आजमाएँ। कोई कारण दिखाई नहीं देता पर अकारण कोई कार्य भी नहीं होता। जब उसका प्रत्यक्ष कारण नहीं दिखाई देता तो अपरोक्ष कारण जरूर होना चाहिए। वह अपरोक्ष कारण यही हो सकता है कि हमारे विचारों का युग आ गया था। विक्टर ह्यूगो ने कहा है-''There is some thing more powerful than armies in ideas whose hour has come'' अर्थात् सेनाओं से भी सशक्त वे विचार होते हैं जिनके प्रगट होने का समय आ गया हो। तुम्हारी विरोध की पराजय अप्रत्याशित नहीं, वह तो निश्चित थी। इसीलिए साधन सम्पन्न होकर भी तुम हार गये। और हमारे श्री क्षत्रिय युवक संघ की विचारधारा की विजय हुई।''

(क्रमशः)

खरपतवार

– कृपाकांक्षी

वर्षा होने पर फसल के बीच पैदा होने वाली अनुपयोगी घास खरपतवार कहलाती है। यह घास जब भी फसल बोयी जाएगी, अनचाहे रूप में अवश्य पैदा होगी। लेकिन खरपतवार के डर से न तो कभी फसल बोना बंद हुआ है और न कभी बन्द होगा। लेकिन यहाँ एक प्रश्न और उठता है, क्या खरपतवार फसल बोने पर ही पैदा होता है? खरपतवार तो अनचाही घास होती है और वह तो हर उस भूमि में पैदा होगी जिसमें किंचित मात्र भी उत्पादकता होगी। यहाँ तक कि पत्थर के बीच दरार में भी यदि मिट्टी और बीज का संयोजन हो जाए और ऊपर से वर्षा हो जाए तो उस अनचाहे बीज के अंकुरण को रोका नहीं जा सकता। इसलिए खरपतवार से डर कर किसान कभी फसल बोना बन्द नहीं करता बल्कि फसल के साथ पैदा हुए खरपतवार को बार-बार उखाड़कर फसल की वृद्धि के लिए अनुकूलता पैदा करता रहता है। इस प्रकार यह स्वाभाविक सत्य है कि फसल बोयेंगे तो खरपतवार उगेगी ही और नहीं बोयेंगे तो भी उगेगी ही। केवल एक ही उपाय है कि यदि भूमि की उर्वरता, उसकी उत्पादन शक्ति शत प्रतिशत नि:शेष हो जाए, सर्वथा समाप्त हो जाए तो उसमें खरपतवार नहीं उगेगी।

ऐसी ही प्रक्रिया साधनागत जीवन की है। यदि हम कुछ करेंगे को कर्तृत्व आयेगा ही और कर्तृत्व अपने साथ कर्तापन का भाव स्वाभाविक रूप से लायेगा। यदि हम स्वाभिमान की साधना करेंगे तो अहंकार साथ-साथ पैदा होगा ही, यह स्वाभाविक है। लेकिन हमारा कर्तापन का भाव या अहंकार यदि हम कुछ नहीं करेंगे या स्वाभिमान की साधना नहीं करेंगे तो नहीं आएगा ऐसा भी नहीं हो सकता क्योंकि खरपतवार के लिए फसल का बोया जाना आवश्यक शर्त नहीं है, वह तो तब भी उगेगी, हाँ फसल न बोयेंगे तब भी उसका उगना स्वाभाविक है। इस प्रकार हमारा अहंकार, हमारा स्वार्थ, हमारा कर्तापन का भाव, हमारा तमोगुणी क्रोध, हमारा लोभ, थकान, विश्राम की चाह, निराशा आदि खरपतवार हैं। जब भी हम साधना में प्रवृत होंगे, विशेष रूप से संघ द्वारा उद्घाटित समष्टिगत साधना में प्रवृत होंगे तो ये सब स्वाभाविक रूप से आने ही हैं।

यदि हम शाखा लगाने जायेंगे और शाखा अच्छी लगने लगी तो कर्तापन का भाव जागेगा ही। यदि हम विषय को अच्छी तरह समझायेंगे और सुनने वालों के चेहरे पर संतुष्टि देखेंगे तो अहंकार का अंकुर फूटेगा ही, यह स्वाभाविक है। यदि कोई हमारे काम को सराहेगा तो आत्मप्रदर्शन की हमारी खरपतवार स्वयं के लिए पोषण प्राप्त कर ही लेगी। इस प्रकार हर अच्छे काम के साथ इन खरपतवारों का आना निश्चित ही है। अब यह हमारे पर निर्भर है कि हम एक कुशल किसान की भाँति इन खरपतवारों से डरे बिना इनका समुचित निराकरण करते हुए इन सांघिक गतिविधियों में उत्साह के साथ सक्रिय रहें या पलायनवादी हो जाएँ। लेकिन यहाँ एक बात और महत्त्वपूर्ण है कि जिस प्रकार फसल न बोने पर भी अनचाही घास तो पैदा हो ही जाती है, उसी प्रकार हम पलायनवादी हो जाएँगे तो भी इन अवगुणों से तो नहीं बच पायेंगे।

जब तक संकल्प-विकल्प रहेंगे, जब तक ज्ञानाग्नि द्वारा हमारे कर्म दग्ध नहीं होंगे, जब तक दर्शन, स्पर्श और विलय नहीं होगा तब तक हम स्वभाव के विपरीत अप्राकृतिक रूप से कर्म संन्यास के नाम पर पलायनवादी भले ही हो जाएँ, जो स्वयं अपने आप में बड़ी खरपतवार है, उपर्युक्त दुर्गुणों से बच नहीं सकते। इसलिए जब तक हमारी स्थिति परमेश्वर की कृपा से किसी भी प्रकार के संकल्प-विकल्प के लिये पूर्णतया बंजर-भूमि की तरह नहीं हो जाती है तब तक किसी भी प्रकार की स्वाभाविक कमजोरियों से घबराये बिना समष्टिगत साधना के निर्देशों

के अनुरूप निरंतर क्रियाशील रहना ही उन्नति की ओर ले जाने वाला मार्ग है।

इस मार्ग पर बढेंगे तब ही खरपतवारों को पहचान पाएँगे और फिर तद्नुरूप निराई-गुड़ाई कर पावेंगे। निराई-गुड़ाई ही एक उपाय है और यदि वह उपाय योग्य मार्गदर्शक के मार्गदर्शन में निरंतर जारी है, तो फिर इन खरपतवारों से क्या डरना? हमारे लिए सौभाग्य की बात है कि हमें पूज्य तनसिंहजी की कृपा से पग-पग पर मार्गदर्शन करने वाला पथ मिला है, उस पथ पर चलकर अपनी खरपतवारों को निर्मूल करने का अनुभव हासिल कर चुके अनुभवी मार्गदर्शक हैं। इसलिए आएँ, हम परमेश्वर से प्रार्थना करें कि वे हम पर कृपा कर हमें ऐसे योग्य मार्गदर्शकों के कृपापात्र बनाए रखें, श्री क्षत्रिय युवक संघ के कृपापात्र बनाए रखें।

पूज्य तनसिंहजी के जन्म दिवस पर

मैंने देखा

– श्री दर्शक

उन्नासी के बाद तनसिंहजी को,
किसी ने, कहीं, कभी देखा?
हाँ! मैंने देखा। बाहर व भीतर से देखा,
खुली व बन्द आँखों से देखा।।

पढते-पढते, दिन और रात को,
रजपूती का जब रुदन देखा।
गहन चिन्तन कर, स्वयं को तोलकर,
संघ की स्थापना करते देखा।।

बदलते दृश्य देखे, दिखाये,
संघ से समाज को बदलाते देखा।
होनहार के खेल बहुत खेले,
एक अनूठा खेल खिलाते देखा।।

समाज चरित्र की स्थिति देखकर,
भीतर में पीड़ा का सागर देखा।
गीता माँ की गोद में बैठकर,
समाज सेवा का पाठ पढाते देखा।।

साधक समस्याएँ सुलझाई,
शिक्षक की समस्याओं से जूझते देखा।
साधना पर खुद ने चलकर,
हमको चलना सिखाते देखा।।

बाहर तो लड़ते रहते थे ही,
जेल संस्मरण विप्लवी देखा।
अपने प्रति लापरवाह बने रहे,
हमारी परवाह करते देखा।।

भिखारी की कथा अच्छी सुनाई,
भीख मांगते पर कभी न देखा।
पंछी की राम कहानी कहते कहते,
हमारे चारों ओर उड़ते देखा।।

झनकार से झंकृत साधक गण को,
सहगान गवाते नचाते देखा।
'संघे शक्ति कलौयुगे' का,
नारा सार्थक कर दिखाते देखा।।

शिविरों में शाखाओं में,
छोटे-छोटे बच्चों में देखा।
जयन्तियों व पुण्यतिथि पर,
श्रद्धा सुमन चढाते देखा।।

देखना चाहा, उसने देखा,
धन्य हो गया, जिसने देखा।
अनदेखा कोई कर नहीं सकता,
एक बार आपको जिसने देखा।।

हमारा संकल्प

– महिपालसिंह चूली

श्री क्षत्रिय युवक संघ का कार्य करते हुए बहुत से लोगों से मिलना होता है। भिन्न-भिन्न प्रकृति के लोग मिलते हैं जिनके भिन्न-भिन्न अनुभव होते हैं जिनके आधार पर अलग-अलग मत-मतान्तर सुनने को मिलते हैं। हमारी चाह तो रहती है कि ये सभी संघ को समझें, संघ से जुड़ें और सक्रियता दिखाएँ। लेकिन, कुछ लोग तो हमारे सहयोगी बनते हैं, कुछ केवल दर्शक की भूमिका निभाते हैं, कुछ सक्रिय भी बन जाते हैं तो कुछ इस कार्य को महज समय व धन का अपव्यय ही मानते हैं। कुछ ऐसे भी मिलते हैं जो अपना सर्वस्व समर्पण कर साथ चलने का संकल्प भी निभाते हैं।

संघ मार्ग पर चलने वालों का यदि इस पथ पर चलकर सनातन सत्य को प्राप्त करने की बात पर विश्वास नहीं होगा, तो भले ही साथ चलते नजर आएँ, उनका संकल्प दृढ नहीं रह पाएगा, डगमगाता रहेगा। माता सीता का रावण द्वारा हरण करने के बाद रावण से भगवान राम का युद्ध होना ही था। उन्होंने तत्कालीन शासकों से सहयोग का संदेश भिजवाया कि इस धर्मयुद्ध में साथ देना चाहें तो आ जाएँ। एक अवसर था उन लोगों के लिए कि वे राम के बन जाएँ। लेकिन रावण के डर से वे साथ नहीं आए और एक सुलभ अवसर को उन्होंने खो दिया।

भगवान की योजना तो किसी व्यक्ति विशेष के लिए नहीं रुका करती है। उनका साथ बन्दर और भालुओं ने दिया, प्राप्त अवसर का पूरा लाभ उठाया और वे अमर हो गए। रावण से युद्ध भी जीत लिया गया। ईश्वर उनकी सहायता के लिए आते हैं जो अपने संकल्प पर दृढ रहकर कर्मरत रहते हैं। भगवान के आशीर्वाद से बड़े से बड़े प्रयत्न-पुरुषार्थ देखते ही देखते पूरे हो जाते हैं। रानी लक्ष्मीबाई की सेना ने अंग्रेजों के छक्के छुड़ाए, रानी की जांबाजी पर भरोसे ने उन्हें अजेय बना दिया। छोटी सेना और भीलों के सहयोग से महाराणा प्रताप ने अपना खोया राज्य प्राप्त कर लिया। अकिंचन चन्द्रगुप्त को जब चाणक्य ने उसके बल का भान करवाया तो उसने अपना राज्य अफगानिस्तान तक बढा लिया। हताश-निराश अर्जुन को भगवान कृष्ण यदि गीता का उपदेश देकर कर्तव्य कर्म की महत्ता नहीं समझाते तो क्या वह महाभारत का विजेता कहलाता?

याद रखने योग्य बात एक ही है कि यदि विश्वास व दृढ संकल्प हो तो विजय प्राप्त होकर के ही रहेगी। रातों रात कोई महाराणा प्रताप नहीं बन जाता, इसके लिए पल-पल अपने विश्वास की परीक्षा देनी होती है। समाज सेवा पर आगे बढ चले हम स्वयंसेवकों पर भी यही बात लागू होती है। यहाँ संघ कार्य में भी अपने विश्वास व अपनी संकल्पशक्ति की परीक्षा पल-पल देनी ही पड़ेगी।

स्वच्छता की प्रक्रिया है ही ऐसी कि उसमें रुकने, ठहरने, भटकने जैसी आदतों का कोई स्थान नहीं है। रोज सफाई-धुलाई करने पर भी घर रोज ही सफाई की माँग करता है, क्योंकि कुछ गन्दगी आ ही जाती है। उसी प्रकार न चाहते हुए भी हमारे चिन्तन,चरित्र व व्यवहार में कहीं न कहीं, कोई न कोई मलिनता आ ही जाती है, जिसे साफ करना आवश्यक है। अपने नेता पर पूर्ण विश्वास, प्रलोभनों से दूर बस संघ के प्रति पूर्ण निष्ठा ही आत्म निरीक्षण, आत्मसुधार, आत्मविश्वास जैसे विभिन्न चरणों में गुजार कर व्यक्तित्व को उस योग्य बना देता है कि जिसकी सहायता करने को भगवान सदा पास खड़े नजर आते हैं।

संघ के प्रति पूर्ण विश्वास ही हमें अंधेरी राहों से प्रकाश की ओर ले जाता है। यह दृढसंकल्प ही उस सत्य के साक्षात्कार में सहायक है, जैसे-भीष्म प्रतिज्ञा के आगे भगवान सूर्य को झुकना पड़ा; सावित्री के संकल्प के आगे यमराज को झुकना पड़ा, यह उनके संकल्प की ताकत का ही परिणाम था। हमें बस संघ की आज्ञा को सर्वोपरि मानकर उसके आदेशों पर चलना है। कहीं और जाने, भटकने या गुरुमंत्र लेने की आवश्यकता नहीं है। बस हमारे लिए श्री क्षत्रिय युवक संघ ही सब कुछ है- यही वास्तविक है, यही गुरु है, यही यथार्थ है, यही गीता है, यही भगवान है। बस जरूरत है तो हमारे संकल्प की दृढ़ता की, पूर्ण विश्वास व धैर्य की, बस यही सद्‌मार्ग है।

फूल खिलेंगे धीरज धरिये,
भरिये रस भंडार।

जीवित समाज

– गिरधारीसिंह डोभाड़ा

समाज क्या है? क्या मानवों की बहुतायत ही समाज है? बहुत परिवारों का समूह ही क्या समाज कहलाता है? क्या बहुसंख्यक संस्थाएँ मिलकर समाज रचना करती हैं? भिन्न-भिन्न जन समुदाय मिलकर समाज स्थापित करते हैं क्या? बहुत बड़ी संख्या में स्त्री-पुरुष, बाल-वृद्ध साथ निवास करते हैं तथा अलग-अलग कार्य करते हैं, उनकी संख्या तो अवश्य बड़ी होती है लेकिन वह भी समाज नहीं बनता। समूह अवश्य कहलाता है पर समाज नहीं बनता।

अफ्रीका के जंगलों और घास के मैदानों में बड़ी तादाद में जंगली भैंसे, हाथी, जीब्रा, हिरण इत्यादि साथ-साथ रहते हैं, अपनी-अपनी खुराक प्राप्त करते हैं, प्रकृति प्रदत जीवन व्यवहार करते हैं, अपनी-अपनी सुरक्षा करते हैं, फिर भी उनका समूह समाज नहीं कहलाता। उनकी अपनी-अपनी प्रजाति का समूह कहलाता है। वैसे ही भिन्न-भिन्न प्रजाति के परिन्दों का भी समूह होता है। तब समाज क्या है?

समाज भी मानवों का एक समूह ही है, लेकिन वह समूह जिनका कुल एक होता है। वह मानव समूह जो एक ही वंश-परम्परा के होते हैं। जिनका स्वधर्म एक होता है। जिनके संस्कार समान होते हैं। जिनकी संस्कृति एक होती है। जो अपने स्वधर्म पालन से इतिहास बनाते हैं, संस्कृति स्थापित करते हैं। ऐसी विशिष्ट मानव प्रजाति के समूह को समाज कहते हैं। वह मानव जाति जो अपने कर्तव्य पालन के कारण महान संस्कृति व महान इतिहास की धनी है, वह समाज है। जो ऐसा नहीं करते वे मानव समूह तो टोलियाँ हैं, कबीले हैं। उन्हें समाज नहीं कह सकते। उनको समाज कहना अनुचित नहीं तो अतिशयोक्ति अवश्य है।

मानव जाति में क्षत्रिय वर्ग एक समाज है। सृष्टि की उत्पत्ति से ही क्षत्रिय वर्ग, क्षत्रिय जाति, क्षत्रिय समाज की उत्पत्ति हुई। क्षत्रिय के बिना, क्षत्रिय के अभाव में सृष्टि का संचालन सुचारू रूप से होना सम्भव नहीं है। क्षत्रिय का कार्य ही है-''परित्राणाय साधूनाम् विनाशाय च दुष्कृताम'। अर्थात्-न्याय, ज्ञान, प्रकाश, नीति, धर्म इत्यादि सद्गुणों, सद्तत्त्वों की रक्षा करना तथा उससे विपरीत असद, अन्याय, अज्ञान, अधर्म, अनीति, अंधकार इत्यादि का विनाश करना। किस युग में सत्, धर्म, न्याय, नीति, ज्ञान, प्रकाश इत्यादि की रक्षा आवश्यक नहीं है?

यह सृष्टि द्वन्द्वात्मक है। हर युग में सद् और असद्, धर्म और अधर्म, न्याय और अन्याय, नीति और अनीति, ज्ञान और अज्ञान, प्रकाश और अंधकार के बीच संघर्ष चलता ही रहा है और चलता रहेगा भी, जब तक कि यह सृष्टि रहेगी। 'जड़ और चेतन, चर और अचर, स्थूल और सूक्ष्म, जीव और जगत के जीवन अस्तित्व की एकमात्र शर्त-ईश्वरीय विधान में सहायक होने वाला गुण उसकी उपयोगिता है।' (मेरी साधना-34) जो जाति ईश्वरीय विधान में सहायक होने वाला गुण रखती है, उसके अनुसार अपना कर्तव्य निभाती है वही समाज है। क्षत्रिय के लिए यह गुण है क्षत्रियत्व। क्षत्रियत्व के अनुसार कर्म करना ही उसका स्वधर्म है। इस स्वधर्म का पालन करने से क्षत्रिय समाज ने महान और गौरवपूर्ण इतिहास बनाया, महान सामाजिक संस्कृति का निर्माण किया। इन गुणों के साथ कार्य करने वाली इकाइयों के समूह ने समाज की रचना की।

समाज तो बना पर जीवित समाज क्या है? समाज का भी क्या कोई जीवन होता है? हाँ, समाज का भी जीवन होता है। जो समाज अपनी आदर्श जातीय परम्पराओं का निर्वहन करता है, अपनी संस्कृति का अनुसरण करता है जो उसका कर्तव्य है, वही उस समाज का जीवन है। स्वधर्म का पालन करना ही समाज का जीवन है। कर्तव्य का पालन कौन कर सकता है? वही जो जिन्दा है। जिसके शरीर के अंग-चेष्टाएँ नहीं कर सकते, जो बेहोशी में जी रहा हो, उसके हृदय की गति मंद पड़ गई हो, जिसका मस्तिष्क कुछ सोच न सके, उसको हम

क्या कहेंगे? यही न कि वह जिन्दा दिखता तो है पर है न के बराबर। जिन्दा तो उसे कहते हैं जिसमें भरपूर चेतना भरी हो, जो सोच सकता हो, कार्य कर सकता हो वही व्यक्ति तो जिन्दा है, अन्यथा रुग्णावस्था में है। समाज पर भी यही बात लागू होती है।

जीवित समाज वह है जो अपने कर्तव्यों का पालन करता हो। अपने स्वधर्म का पालन करता हो। संसार में अपनी उपयोगिता सिद्ध करता हो। किसी उपयोगिता विहीन वस्तु की क्या कीमत? कोई भी वस्तु चाहे छोटी हो या बड़ी, पर उपयोगी न हो तो किस काम की? उपयोगिता ही उसकी कीमत है। किसी के प्रति आदर, सम्मान, प्रेम उसकी संसार में उपयोगिता पर ही निर्भर है। उपयोगिताहीन अस्तित्व हीन के बराबर है। जो समाज अपनी उपयोगिता खो चुका हो, वह जीवित नहीं रह सकता, वह नाम मात्र का समाज है। जीवित नहीं है। वर्तमान परिपेक्ष में विचार करें तो क्या क्षत्रिय समाज जीवित है? क्या 'परित्राणाय साधूनाम् विनाशाय च दुष्कृताम्' आज का क्षत्रिय कहा जाने वाला समाज कर रहा है? नहीं कर रहा है न? क्यों नहीं कर रहा? क्योंकि 'शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धेचाप्य पलायनम। दानमीश्वर भावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम्।।' ये जो क्षत्रिय के स्वाभाविक गुण भगवान कृष्ण ने गीता में बताए हैं, अब कहाँ दिखाई देते हैं। आज का क्षत्रिय इन स्वाभाविक गुण और कर्मों को भूलकर निज स्वार्थमय होकर सुख-सुविधा के साथ केवल अपनी उदरपूर्ति करने में ही व्यस्त है। संसार में चारों ओर अराजकता और करुण क्रन्दन फैला हो और क्षत्रिय चुप बैठा हो, निष्क्रिय हो गया हो तो कौन उसकी पूछ करेगा, कौन उसे जीवित समाज कहेगा? आज वह श्वास तो ले रहा है लेकिन रुग्णावस्था में है। उसके शरीर को लकवा मार गया है। वह स्वयं कुछ नहीं कर सकता है। वह परावलम्बी बन गया है। उसके स्वावलम्बन की भावना ही नष्ट हो गई है। और जो स्वावलम्बी नहीं, उसकी कोई जरूरत भी नहीं, उसका कोई मान-सम्मान नहीं।

तो क्या वर्तमान युग में क्षत्रिय जाति समाप्त हो जाएगी? 'चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं' सूत्र जो स्वयं भगवान कृष्ण ने कहा है, उसका क्या होगा? यह सूत्र गलत भी तो नहीं हो सकता। पू. तनसिंहजी ने भी कहा है-'वो कौम न मिटने पाएगी, ठोकर लगने पर हर बार उठती जाएगी।' कौनसी कौम-'जिस आँगन में राम थे खेले, खेले कृष्ण कुमार; गंगा को धरती पर लाने भागीरथ थे आए, ध्रुव की निष्ठा देख के भगवन पैदल दौड़े आए।' और 'कष्टों में जिस कौम के बन्दे जंगल जंगल छानेंगे, भोग और ऐश्वर्य आदि की मनुहारें ना मानेंगे, घर-घर दीप जलाएँगे।' वो कौम मिट कैसे सकती है?

शेर के एक बच्चे की कहानी है, जो संयोगवश बचपन में शेरों से बिछुड़कर भेड़ों के साथ पला और बड़ा हुआ तथा भेड़ों की तरह ही में-में करने लगा। जब दूसरे शेर ने उसे पकड़कर उसके असली रूप का ज्ञान करवाया तो वह भी शेरों की तरह दहाड़ने लगा। तब जंगल में शान से रहने लगा, भेड़ों की तरह डरकर भागना बंद हुआ।

क्षत्रिय समाज को भी उसके भूले हुए रूप, गुण और कर्तव्य का भान कराना पड़ेगा। उसके स्वधर्म पालन के ज्ञान को जगाना पड़ेगा। कई सदियों से क्षत्रियों में कर्तव्यहीनता की बीमारी घर कर गई है। वे स्वार्थ-परायण हो गए हैं। हालांकि उनमें वीरता अभी भी कूट-कूटकर भरी है परन्तु भेड़ों के बीच पले उस शेर के बच्चे की सी हालत है।

क्षत्रिय कुल में एक व्यक्ति का जन्म हुआ, जिसको क्षत्रियों की वर्तमान हालत, उनके विचार-व्यवहार देखकर पीड़ा हुई। अपने कुल के उस शेर के बच्चे की तरह भूले हुए व्यक्तियों को उनके असली स्वरूप का ज्ञान देने तथा उसके अनुकूल संस्कार देने के लिये उसने एक मनोवैज्ञानिक चिकित्सा पद्धति प्रारम्भ की और स्वयं उसमें चिकित्सक बनकर चिकित्सा प्रारम्भ की, नए चिकित्सकों का निर्माण किया। कहने की आवश्यकता नहीं, वह चिकित्सालय 'श्री क्षत्रिय युवक संघ' है और उसके संस्थापक पू. तनसिंहजी थे।

आज बीमारी के इलाज की मुख्यत: दो पद्धतियाँ हैं। एक है एलोपैथी और दूसरी आयुर्वेदिक पद्धति। एलोपैथी में मरीज कुछ समय के लिए ठीक तो होता है

परन्तु उपयोग की गई दवाओं से अन्य कई बीमारियों का ग्रास भी बन जाता है। आयुर्वेदिक पद्धति में बीमारी ठीक होने में समय लगता है लेकिन बीमारी मूल से निकल जाती है। उसके लिए परहेज रखना पड़ता है। कुछ यम-नियमों का पालन करना पड़ता है। हानिकारक तत्वों से दूर रहना पड़ता है।

हालांकि आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति की तरह संघ की पद्धति मंद गति की है लेकिन स्थिर गति से निरंतर चलने वाली है। यह पद्धति है 'सामुहिक संस्कार मय कर्मप्रणाली'। यहाँ जो इलाज किया जाता है, वह समूह में किया जाता है। यहाँ जो ज्ञान लिया जाता है, जो संस्कार दिए जाते हैं, वे समूह में दिए जाते हैं। यहाँ दिए गये संस्कारों का परीक्षण स्वयं उस व्यक्ति के व्यवहार से ही होता है। संस्कारित होने वाले व्यक्ति को यह नहीं मालूम कि उसने क्या-क्या संस्कार पाए हैं, पर उसके व्यवहार को देखकर अन्य व्यक्ति समझ लेता है कि यह संस्कारित है, इसमें क्षत्रियोचित संस्कार स्फुरित हो रहे हैं। संघ के संस्कारों के लिए कुछ परहेजों का कठोरता से पालन करना पड़ता है, इसलिए गति मंद है पर निरन्तरता और नियमितता बरतने से काम बनता है।

श्री क्षत्रिय युवक संघ का कार्य गीता के ज्ञान पर आधारित है। गीता का निष्काम कर्मयोग संघ कार्य का आधार है। संघ निष्काम कर्म फल सूत्र का अनुसरण करता है। संघ का कार्य संपूर्ण योग मार्ग का कार्य है। श्री क्षत्रिय युवक संघ कुछ करने योग्य कार्यों और कुछ न करने योग्य कार्यों के यम-नियमों पर चलता है, जो ईश्वर प्राप्ति की ओर बढने का मार्ग है।

श्री क्षत्रिय युवक संघ का कार्य निष्काम कर्म फल की भावना पर चलता है, जिसे गीता में निष्काम कर्मयोग कहा गया है। श्री क्षत्रिय युवक संघ अपने कर्तव्य पालन को, अपने स्वधर्म को अपना अधिकार मानता है, वह कर्म के फल को अपना अधिकार नहीं मानता। यह श्री क्षत्रिय युवक संघ का संस्कार है। जो समाज या जाति अपने कर्तव्य पालन को, अपने स्वधर्म पालन को अपना अधिकार मानकर फल की कामना किए बिना संसार के प्रति अपने दायित्व को निभाती हो, उस जाति की, उस समाज की मृत्यु कैसे हो सकती है? वह समाज हमेशा जीवित रहता है। यह संभव है कि वह जाति कभी अपने कर्तव्य पथ से भटक जाए, गुमराह हो जाए, तो वह रुग्णता को अवश्य प्राप्त होती है। वह जाति इस स्थिति में संसार में कुछ काल के लिए उपेक्षित अवश्य होती है लेकिन पूर्ण नष्ट नहीं होती। जब वह जाति अथवा समाज अपने भुलाए हुए संस्कारों को, अपने जातीय शाश्वत गुणों को प्राप्त कर लेता है, उन शाश्वत गुणों से संस्कारित होकर अपने शाश्वत कर्तव्य पथ पर अग्रसर होता है, तो वह फिर से संसार में अपनी उपयोगिता सिद्ध कर लेता है। जो समाज संसार में अपनी उपयोगिता बनाए रखता है, वही समाज जीवित रहता है।

क्षत्रिय समाज सृष्टि के प्रारम्भ काल से द्वापर के अंत तक (महाभारत काल तक) अपने स्वधर्म पालन में, संसार में अपनी उपयोगिता में सर्वोच्च शिखर पर रहा। 'रामराज्य' का पर्याय तो आज तक संसार को नहीं मिला है। लेकिन महाभारत काल से इस समाज की कुछ इकाइयों में अहं, स्वार्थ, कर्तव्यच्युतता ने प्रवेश कर लिया। कुछ कुसंस्कार, अहं और स्वार्थ के संरक्षण में पनपने शुरू हो गये। वर्तमान प्रजातंत्र के उद्गम तक ये कुसंस्कार फैलाव लेते रहे और यही इस समाज के पतन के कारण बने। इस समाज को गिरते-गिरते इस स्थिति तक पहुँचने में पाँच हजार साल से भी अधिक समय हो गया, मगर आज भी वह संपूर्ण रूप से नष्ट नहीं हुआ है और होगा भी नहीं, क्योंकि बार-बार गिरने पर भी पुन: उठ खड़े होने का हौसला रखता है। अब तो उसे औषधीय बूंटी श्री क्षत्रिय युवक संघ के रूप में मिल गई है। अब एक ही पीड़ा सबकी पीड़ा बनती जा रही है। एक ने इस औषधीय बूंटी का पान किया और अब बहुतों ने पान करना प्रारम्भ कर दिया है। अपने दायित्व के प्रति इस तरह की जागरुकता पनपना बताता है कि क्षत्रिय समाज निश्चित ही जीवित है। अब उसकी रुग्णता धीरे-धीरे समाप्त होने जा रही है। जब तक यह सृष्टि रहेगी, तब तक क्षात्रत्व की माँग रहेगी, अत: तब तक क्षत्रियत्व जिन्दा रहेगा।

जय क्षात्रधर्म!

धारावाहिक

चित्रकथा–'लोकदेवता बाबा रामदेव जी'

– बृजराजसिंह खरेड़ा

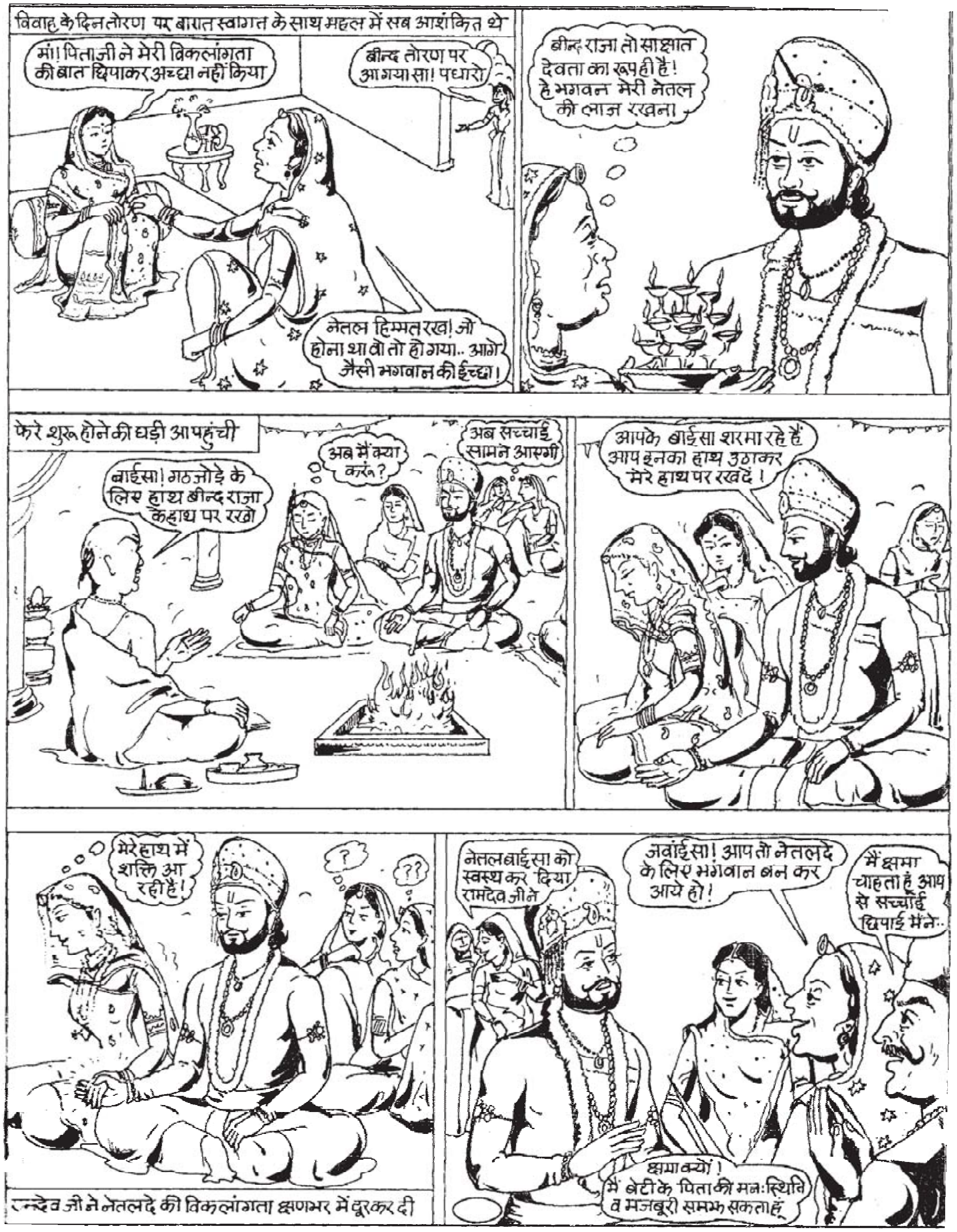
विवाह के दिन तोरण पर बारात स्वागत के साथ महल में सब आशंकित थे
मां! पिताजी ने मेरी विकलांगता की बात छिपाकर अच्छा नहीं किया
बीन्द तोरण पर आ गया सा! पधारो
नेतल हिम्मत रख! जो होना था वो तो हो गया.. आगे जैसी भगवान की ईच्छा।
बीन्द राजा तो साक्षात देवता का रूप ही है! हे भगवन मेरी नेतल की लाज रखना।
फेरे शुरू होने की घड़ी आ पहुंची
बाईसा! गठजोड़े के लिए हाथ बीन्द राजा के हाथ पर रखो
अब मैं क्या करूं?
अब सच्चाई सामने आएगी
आपके बाईसा शरमा रहे हैं आप इनका हाथ उठाकर मेरे हाथ पर रख दें!
मेरे हाथ में शक्ति आ रही है!
?
??
नेतल बाईसा को स्वस्थ कर दिया रामदेव जी ने
जवांईसा! आप तो नेतलदे के लिए भगवान बन कर आये हो!
मैं क्षमा चाहता हूं आप से सच्चाई छिपाई मैंने..
क्षमा क्यों! मैं बेटी के पिता की मनःस्थिति व मजबूरी समझ सकता हूं
...देव जी ने नेतलदे की विकलांगता क्षणभर में दूरकर दी

स्वास्थ्यप्रद हर्बल चाय

– स्वामी गोपाल आनन्द बाबा

भारतीय जन जीवन में चाय स्थापित हो चुकी है। भारत में चाय की खेती बड़े पैमाने पर हो रही है। लोग लाल चाय, ब्लैक टी, मीठी चाय, दूध व शक्कर वाली चाय अपने स्वादानुसार लेते हैं, पीते हैं। इस चाय का अपना नफा-नुकसान है परन्तु यहाँ कतिपय हर्बल चाय के बारे में जानकारी दी जा रही है, जो लाभकारी हैं। इन्हें स्वयं घर में बना सकते हैं; आजकल बाजार में ये बने बनाए भी उपलब्ध हैं।

गुडहल या गुडहल व मधु (शहद) की चाय– एक कप उबलते हुए पानी में एक फूल तोड़कर डाल दें, दस मिनट उबलने दें, तत्पश्चात आधी चम्मच मधु डालकर सिप लेकर पीएं। गुडहल के चटकदार लाल रंग के फूल अधिकतर ग्रीष्म ऋतु में फलते हैं; परन्तु शरद से शीत ऋतुओं में अर्थात् जाड़े में भी कई स्थानों पर मिल जाते हैं। गुडहल की चाय कोलेस्ट्रोल को कम करने का काम करती है और इस प्रकार हृदय के रोगों से बचाव करती है। आधा चम्मच मधु मिलाकर पीने से यह वजन को भी नियंत्रित करने में सहयोगी होती है।

तुलसी व मधु की चाय– तुलसी के चार-पाँच पत्ते एक कप पानी में 3-4 मिनट तक उबाल लें, तत्पश्चात गुनगुना होने पर आधा चम्मच मधु मिला लें। अब सिप लेकर पीएँ। तुलसी के पत्ते चयअपचय (मेटाबॉलिज्म) बढाने में मददगार होते हैं। इस प्रकार मेटाबॉलिज्म को बढाकर मोटापे को नियंत्रण में रखते हैं। ये शरीर से विषैले तत्त्वों-टाक्सीनस् को भी दूर करते हैं। प्रतिरक्षा-तंत्र को भी शक्तिशाली बनाते हैं। अत: सर्दी, खाँसी, जुकाम से बचाव करते हैं। तुलसी के पत्तों की चाय में मधु मिलाकर पीने से ऊर्जा भी मिलती है। इसे खाली पेट पीएं। (भारत में अति प्राचीनकाल से अथवा अनादिकाल से मधु एवं मधु से सम्बन्धित शब्द व नाम प्रचलित है, जैसे-मधुमेह, मधुमिता, मधुमालिनी, माधवी, माधव, मधुमास, मधुचन्द, माधुरी, मधुहंता वगैरह, परन्तु शहद नाम कोई नहीं बोलता है, न रखता है। मधुमक्खी भी लोक भाषा में प्रचलित है न कि शहद की मक्खी। लेकिन लोग मधु के स्थान पर शहद शब्द का प्रयोग धड़ल्ले से करते हैं। जिनका नाम मधुकान्त है, वे भी मधु को मधु न बोलकर शहद बोलना चाहते हैं। पर हम मधु को ही रहने दें तो अच्छा रहेगा।)

दालचीनी चाय– दालचीनी के एक टुकड़े को रातभर एक कप पानी में फूलने दें-गीला करें। प्रात:काल दालचीनी सहित उसी पानी को दो-तीन मिनट तक उबालें। तत्पश्चात सेवन करें। दालचीनी में पॉलीफिनॉल एण्टी ऑक्सीडेन्ट होता है जो रक्तचाप (ब्लड प्रेशर) को नियंत्रित कर हृदय के रोगों की संभावनाओं से बचाता है। यह इन्सुलिन की संवेदनशीलता को भी बढाता है और इस तरह ग्लूकोज का स्तर भी नियंत्रण में रखता है। प्रात:काल में दालचीनी की चाय पीने से मेटाबॉल्जिम और पाचन में सुधार होता है जिससे मोटापे को कम करने में सहयोग मिलता है।

जैस्मीन (चमेली) के फूलों की चाय– एक कप पानी में जैस्मीन के चार-पाँच सूखे फूल डालकर इन्हें पाँच मिनट तक उबाल लें, तत्पश्चात सिप लेकर पीएं। जैस्मीन के फूलों में विद्यमान एण्टी ऑक्सीडेन्ट्स शरीर में बनने वाले फ्री रेडिकल्स को दूर करते हैं। फ्रीरेडिकल्स कोशिकाओं को नुकसान पहुँचाते हैं। जैस्मीन के फूलों से बनी यह चाय प्रमुखत: मोटापे को घटाने के लिए अत्यन्त लाभदायक होती है। दोपहर भोजन के पश्चात नियमित रूप से जैस्मीन की चाय पीने से प्रतिरक्षा तंत्र मजबूत बनता है और हृदय से सम्बन्धित रोगों से भी बचाव होता है।

कैमोमाइल फूलों की चाय– एक कप उबले हुए पानी में कैमोमाइल के चार-पाँच फूलों को डालकर उन्हें पाँच मिनट तक उबालें, फिर सिप लेकर पीएं। इससे त्वचा में नरमाहट और चमक आती है। जिन लोगों को नींद नहीं आने की समस्या है, उन्हें प्रतिदिन रात को सोने से पहले इस चाय का सेवन करना चाहिए। यह शरीर के स्नायु को शिथिल कर नींद लाने में मददगार होती है। अगर व्यक्ति सर्दी, खाँसी, जुकाम से पीड़ित है तो इसमें भी यह चाय जादू का काम करती है।

अपनी बात

दो व्यक्ति एक रास्ते पर चले जा रहे थे। बाजार से गुजर रहे थे जहाँ भीड़ थी, चारों तरफ शोरगुल हो रहा था, जैसा बाजारों में हुआ करता है। दुकाने चल रही थी, ग्राहकी हो रही थी, हर दुकान में ग्राहक मोल-तोल कर रहे थे। मेला-सा भरा था। राह में भी अनेक लोग आ-जा रहे थे। राह चलने वाले भी आपस में बातें करते जा रहे थे। तभी दूर पहाड़ पर बने हुए मंदिर में घंटियाँ बजने लगीं। उन दोनों में से एक व्यक्ति ठिठक कर खड़ा हो गया। सिर झुका लिया। दूसरे व्यक्ति ने पूछा-'क्या कर रहे हो?' उसने जवाब दिया-'तुम्हें सुनाई नहीं पड़ता, मंदिर की घंटियाँ बज रही हैं? कितनी मधुर आवाज आ रही है घंटियों की।' उस दूसरे व्यक्ति ने कहा-'हद हो गई। इस बाजार के ऐसे शोरगुल में तुम्हें कहाँ से घंटियाँ सुनाई पड़ गई, यहाँ तो कुछ भी सुनाई नहीं पड़ रहा है। मुझे तो कुछ भी सुनाई नहीं पड़ रहा है और तुमने सुना। यह कैसे सम्भव है? इस भरे बाजार में मंदिर की बजती हुई घंटियाँ सुनाई पड़ जाएँ, यह असम्भव मालूम पड़ता है।

पहले व्यक्ति ने अपनी जेब से एक रुपया निकाला और उछाल कर जोर से रास्ते पर गिरा दिया। उसकी खननखन की आवाज सुनकर कोई बीस व्यक्ति अचानक दौड़कर उस रुपए की तरफ आए और उन्होंने कहा-किसी का रुपया गिर गया है।

उस पहले व्यक्ति ने कहा-'देखा! इस भरे बाजार में, भीड़ के शोरगुल में रुपए की आवाज बीस व्यक्तियों को एकदम सुनाई दे गई। लेकिन इनको भी मंदिर की घंटियाँ नहीं सुनाई पड़ रही हैं।'

हर व्यक्ति को वही सुनाई पड़ता है, जो उसके मन में बैठा हुआ है। ये जो लोग इकट्ठे हो गए, इनके जीवन में रुपए की आवाज के अतिरिक्त अन्य कोई संगीत नहीं है। इसी कारण भरा बाजार, चारों तरफ आवाज, शोरगुल पसरा हुआ, लेकिन एक छोटे से रुपए के गिरने से होने वाली आवाज इन्हें तत्क्षण सुनाई पड़ गई।

हमने देखा होगा, रात में माँ बच्चे को लेकर सोती है। आंधी आए, तूफान आए, बादल गरजें, बिजली चमके लेकिन दिन भर की थकान से माँ सोई ही रहती है, उसकी नींद नहीं टूटती। पर बच्चा थोड़ा सा कुनमुनाए और उसकी नींद टूट जाती है। दिन भर की थकान तो तब भी है लेकिन बच्चे के कुनमुनाने से उसकी नींद टूट जाती है, बच्चे को थपकी देने लगती है, लोरी गाने लगती है या बच्चे को हृदय से लगा लेती है। आकाश में चमकती हुई बिजलियाँ, बादलों की गड़गड़ाहट उसे नहीं जगा पाई लेकिन बच्चे की कुनमुनाहट ने उसे जगा दिया। क्या हुआ? माँ के पास बच्चे की कुनमुनाहट को समझने का हृदय है, वह उसका अनुभव है। वह बच्चे के लिये सदैव तत्पर है। वह बच्चे के लिए आतुर है।

हमें वही समझ में आता है, जिसके लिये हम तत्पर हों, आतुर हों, जिसकी हमारे अन्दर अभीप्सा है। यह पक्का मानो कि रास्ते में अगर हमें परमात्मा मिल जाए, तो हमें दिखाई नहीं पड़ेगा। क्योंकि हमें वही दिखाई पड़ सकता है, जिसे हम खोजने चले हों। हम जो खोजते हैं, वही हमें मिलता है। जो हम खोजते ही नहीं, वह मिल भी जाए तो मिलकर भी नहीं मिला।

हम सभी एक ही दुनिया में रह रहे हैं। लेकिन यह कहना भी उचित नहीं कि हम सब एक ही दुनिया में रह रहे हैं। सभी ने अपनी-अपनी दुनिया बना रखी है और उसी में रह रहे हैं क्योंकि सभी के अनुभव अलग-अलग हैं। इसी संसार में, इसी बाजार की भीड़ में यदि मीरा जी गुजरती हैं तो उन्हें कृष्ण की बांसुरी बड़ी स्पष्टता से सुनाई पड़ती रहती है। वह बांसुरी बन्द ही नहीं होती। गुजर तो हम भी रहे हैं इसी सांसारिक बाजार से और यदि हमें मीराबाई कहे कि कृष्ण कितनी मधुर बांसुरी बजा रहे हैं। कितनी साफ सुनाई दे रही है, तो हम हँसेंगे। लोग कहेंगे-पागल हो गई है, मस्तिष्क खराब हो गया है, यहाँ कहाँ-कृष्ण, कहाँ की बांसुरी। कैसी बातें कर रही है।

हमें मीराबाई जैसी बात गलत लगेगी, लेकिन जिसके हृदय में उस पीड़ा का तीर लगा हो, वही ऐसी बात समझ सकेगा। जिसने चोट खाई हो, वही पहचानेगा। जिसे ऐसी पीड़ा का थोड़ा-सा अनुभव हुआ हो, वह और बड़े अनुभव को समझने के लिये तैयार हो जाता है। यही बात समाज सेवा की है। कोई कहे-समान आज रसातल में जा रहा है, चारित्रिक रूप से अपनी पहचान खो चुका है, अपने कर्तव्य, अपने दायित्व को नकार चुका है। तो साधारणतया लोग उस व्यक्ति की पीड़ा को नहीं समझते। वे कहते हैं-आज संस्कार की बातें करना, कर्तव्य की बातें करना असंगत है, समाज को अठ्ठारवीं शताब्दी की ओर मोड़ने की बात है। लेकिन जो समाज की पीड़ा से पीड़ित है, वही इस तथ्य को स्वीकार कर सकता है। कोई या तो आकस्मिक रूप से पीड़ित हो गया है या जिसने संकल्पपूर्वक इस पीड़ा का घाव कर लिया हो, वही इस स्थिति को स्वीकार कर सकेगा। उसे ही अहं और स्वार्थ के आज के कोलाहल में समाज मंदिर की घंटियाँ सुनाई पड़ेंगी।

परमात्मा की प्यास की तरह समाज सेवा की प्यास भी एक पीड़ा है, एक घाव है। इसीलिए बहुत कम लोग इस राह पर चलने की हिम्मत कर पाते हैं। ऐसी पीड़ा को झेलने की तैयारी किसकी है? हाँ, हम संसार की पीड़ा से छुटकारा पाने के लिए तो जरूर प्रार्थना करते हैं, लेकिन क्या हमने कभी प्रभु से प्रार्थना की है कि मेरे हृदय में मेरे कर्तव्य को निभाने की, समाज चाकर बनने की पीड़ा भर दो। क्या हमने कभी प्रभु से ऐसी प्रार्थना की है कि मेरे हृदय को छेद डालो कि मैं समाज सेवा के लिये तड़फूं, जैसे मछली तड़फती है पानी के बाहर।

यदि संकल्पपूर्वक ऐसी प्रार्थना की होती तो प्रभु अवश्य सुनते, ऐसी प्रार्थना करने वाले हमारे पूर्वजों, हमारे अग्रजों की सुनी गई ही है। पर हमारी तो प्रार्थना होती है धन के लिये, धंधा ठीक चलने के लिये, नौकरी के लिए, बीमारी से छुटकारा पाने के लिये, चमत्कार के लिए। हमने प्रार्थना की है तो इस सांसारिक प्रसाद के लिए ही। संसार के लिए की गई प्रार्थना परमात्मा तक नहीं पहुँचती। व्यर्थ चली जाती है क्योंकि उन पर पता ही गलत होता है। पता तो संसार का होता है और भेजते परमात्मा को हैं। समाज-सेवा के मंदिर की घंटियाँ हमें सुनाई कैसे दे, क्योंकि हमने वैसी पीड़ा प्राप्त करने के लिए न प्रार्थना की, न संकल्पपूर्वक समाज सेवा का घाव पैदा कर पीड़ा जगाई।

प्रभु से प्रार्थना यही करें कि वह हमें समाज सेवा की ऐसी पीड़ा दे कि उसके लिये हम तड़फें और सदैव सक्रियता के साथ सेवारत रहें।

पृष्ठ 18 का शेष

महान क्रांतिकारी-राव ....

खरवा के गोपालसिंह ने दुर्भिक्ष से भूखी जनता को बचाने हेतु परम उदारता एवं दिलेरी सहायता कार्य शुरू किया। यद्यपि उसकी आय के साधन स्रोत अति सीमित थे। अल्प आय वाले ठिकाने के वे स्वामी थे और खजाना प्राय: खाली था। परन्तु उनका हृदय महान् था, वे परम उदार एवं न्याय व त्यागमूर्ति थे। भूख से तड़फड़ाती जनता के दु:ख का हृदय विदारक दृश्य वे नहीं देख सके। उन्होंने कई स्थानों से कर्ज लिया। अपने इलाके के कई गाँव अजमेर और ब्यावर के सेठों के गिरवी रखे और भूखी मानवता की सेवा में जुट गए। खरवा में उन दिनों में तीन स्थानों पर खीचड़ा बनता था और भूखे लोगों को खिलाया जाता था। इस प्रकार उस छपनियाँ अकाल में सीमित साधनों के होते हुए भी राव गोपालसिंह ने अपने ठिकाने की आय से अधिक द्रव्य भूखी जनता के पालनार्थ दिल खोल कर खर्च किया। उस समय से उनके ठिकाने पर लाखों का कर्ज भार चढ गया। उनके परम उदार चरित्र के दृष्टा समकालीन चारण कवियों ने मानवता के प्रति उनकी सेवा और असीम त्याग को निम्नांकित शब्दों में चिरस्थायी बना दिया -

भय खायो भूपति किता, दुरभख छपनों देख।
पाळी प्रजा गोपाल सी, परम धरम चहुँ पेख।।
राणी जाया राजवी, जुडै न दूजा जोड़।
छपन साल द्रब छोल दी, रंग गोप राठौड़।।

(क्रमश:)

धन्यवाद-आभार

मारवाड जंक्शन पंचायत समिति,वार्ड नं. 10 की महान जनता ने अपने बेटे कुशाल सिंह को सेवा करने का मौका दिया है।मैं मारवाड जंक्शन पंचायत समिति, वार्ड नं. 10 के सभी देवतुल्य मतदाताओं का ह्रदय से आभार व्यक्त करता हूं। साथ ही आभारी हूं राजपूत समाज के सभी सामाजिक बंधुओ का। जिन्होंने इस चुनाव में मुझे अपना समर्थन प्रदान किया।
मैं सभी कोवचन देता हूं कि मैं मारवाड जंक्शन पंचायत समिति एवं समाज के विकास के लिए हर संमय प्रयासरत रहुगा एक बार फिर से सभी सामाजिक बंधु एवं देवतुल्य मतदाताओं का ह्रदय से आभार , साथ ही भारतीय जनता पार्टी के वरिष्ठ नेता एवं कार्यकर्ताओं का भी आभार व्यक्त करता हूं।जिन्होंने पूरी गर्मजोशी के साथ इस चुनाव को जीतने मेंअपनी भूमिका निभाई"

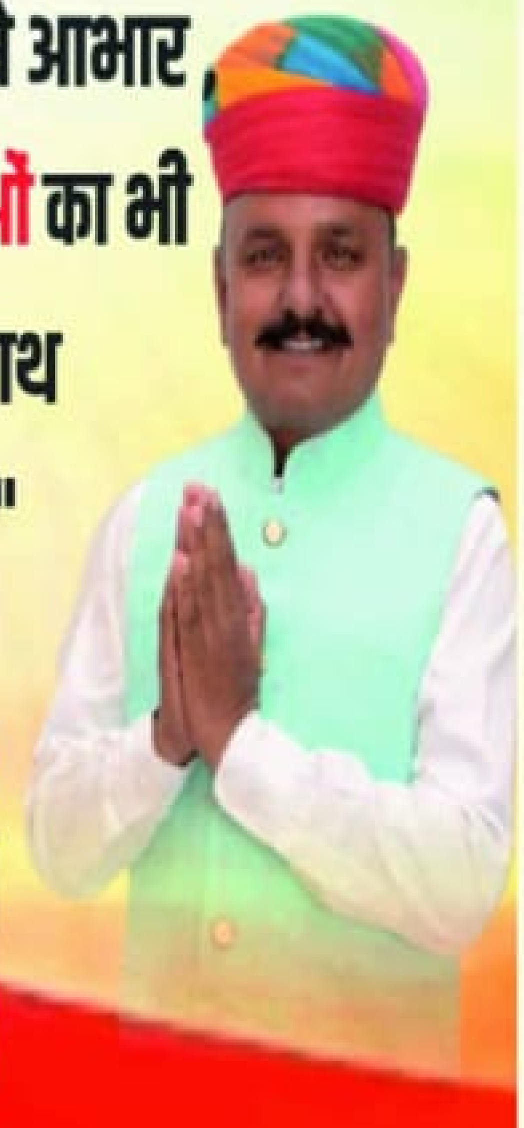

देवेंद्र सिंह (छोटे सा.)

तेजपाल सिंह

खुशवीर सिंह

कुशाल सिंह कुंपावत

ठिकाना धनला

सदस्य,मारवाड जंक्शन पंचायत समिति,वार्ड नं. 10

पंचायतीराज चुनाव 2020

श्रीमती प्रकाश कंवर धर्मपत्नी हिन्दू सिंह जी दूठवा को पंचायत समिति, चितलवाना से प्रधान निर्वाचित होने पर एवं श्रीमती छैल कंवर धर्मपत्नी राण सिंह जी कारोला पंचायत समिति सांचौर से उपप्रधान निर्विरोध होने पर हार्दिक बधाई एवं उज्जवल भविष्य की शुभकामनाएं।

श्रीमती प्रकाश कंवर

श्रीमती छैल कंवर

:: शुभेच्छु ::

भान सिंह साँगड़वा	गोपाल सिंह डावल	गोपाल सिंह चारणीम	करतार सिंह विरोल
लून सिंह तेजमालता	पप्पू सिंह जी झोटडा उप सरपंच सिवाडा	गिरधारी सिंह डभाल	महिपाल सिंह अचलपुर
जितेन्द्र सिंह मूली	डॉ. किशोर सिंह चारणीम	कान सिंह परावा	प्रदीप सिंह मूली
अर्जुन सिंह दाँतिया	जितेन्द्र सिंह सिवाड़ा	मदन सिंह राठौड़ देवड़ा	सूरज पाल सिंह भूतेल
अमर सिंह राजवी डालमाण	छोटु सिंह कारोला	इन्द्र सिंह सोढ़ा भूतेल	प्रताप सिंह किलवा भवानी साफा हाउस सांचौर

जनवरी, सन् 2021
वर्ष : 58, अंक : 01

समाचार पत्र पंजी.संख्या R.N.7127/60
डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City /411/2020-22

संघशक्ति
ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा,
जयपुर-302012
दूरभाष : 0141-2466353
E-mail : sanghshakti@gmail.com
Website : www.shrikys.org

श्रीमान्..

....

....

स्वत्वाधिकारी श्री संघशक्ति प्रकाशन प्रन्यास के लिये, मुद्रक व प्रकाशक, लक्ष्मणसिंह द्वारा ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा, जयपुर से : गजेन्द्र प्रिन्टर्स, जैन मन्दिर सांगाकान, सांगों का रास्ता, किशनपोल बाजार, जयपुर फोन : 2313462 में मुद्रित। सम्पादक-लक्ष्मणसिंह